आचार्य कुन्दकुन्द-रचित

प्रवचनसार

(खण्ड-1)

(मूलपाठ-डॉ. ए. एन. उपाध्ये)

(व्याकरणिक विश्लेषण, अन्वय, व्याकरणात्मक अनुवाद)

संपादन

डॉ. कमलचन्द सोगाणी

अनुवादक

श्रीमती शकुन्तला जैन

प्रकाशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

राजस्थान

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य कुन्दकुन्द-रचित

प्रवचनसार

(खण्ड-1)

(मूलपाठ-डॉ. ए. एन. उपाध्ये)

(व्याकरणिक विश्लेषण, अन्वय, व्याकरणात्मक अनुवाद)

संपादन

डॉ. कमलचन्द सोगाणी

निदेशक

जैनविद्या संस्थान-अपभ्रंश साहित्य अकादमी

अनुवादक

श्रीमती शकुन्तला जैन

सहायक निदेशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी

प्रकाशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

राजस्थान

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

◈ प्रकाशक

अपभ्रंश साहित्य अकादमी

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी

श्री महावीरजी - 322 220 (राजस्थान)

दूरभाष - 07469-224323

◈ प्राप्ति-स्थान

1. साहित्य विक्रय केन्द्र, श्री महावीरजी

2. साहित्य विक्रय केन्द्र

दिगम्बर जैन नसियाँ भट्टारकजी

सवाई रामसिंह रोड, जयपुर - 302 004

दूरभाष - 0141-2385247

◈ प्रथम संस्करण : जुलाई, 2013

◈ सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

◈ मूल्य -350 रुपये

◈ ISBN 978-81-926468-2-4

◈ पृष्ठ संयोजन

फ्रैण्ड्स कम्प्यूटर्स

जौहरी बाजार, जयपुर - 302 003

दूरभाष - 0141-2562288

◈ मुद्रक

जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि.

एम.आई. रोड, जयपुर - 302 001

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
	प्रकाशकीय	v
1.	ग्रंथ एवं ग्रंथकारः सम्पादक की कलम से	1
2.	संकेत सूची	6
3.	ज्ञान-अधिकार	10
4.	मूल पाठ	105
5.	परिशिष्ट-1	
	(i) संज्ञा-कोश	117
	(ii) क्रिया-कोश	129
	(iii) कृदन्त-कोश	132
	(iv) विशेषण-कोश	138
	(v) सर्वनाम-कोश	144
	(vi) अव्यय-कोश	146
	परिशिष्ट-2	
	छंद	153
	परिशिष्ट-3	
	सम्मतिः द्रव्यसंग्रह	156
	सहायक पुस्तकें एवं कोश	159

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकीय

आचार्य कुन्दकुन्द-रचित **'प्रवचनसार (खण्ड–1)'** हिन्दी-अनुवाद सहित पाठकों के हाथों में समर्पित करते हुए हमें हर्ष का अनुभव हो रहा है।

आचार्य कुन्दकुन्द का समय प्रथम शताब्दी ई. माना जाता है। वे दक्षिण के कोण्डकुन्द नगर के निवासी थे और उनका नाम कोण्डकुन्द था जो वर्तमान में कुन्दकुन्द के नाम से जाना जाता है। जैन साहित्य के इतिहास में आचार्य श्री का नाम आज भी मंगलमय माना जाता है। इनकी समयसार, प्रवचनसार, पंचास्तिकाय, नियमसार, रयणसार, अष्टपाहुड, दशभक्ति, बारस अणुवेक्खा कृतियाँ प्राप्त होती है।

आचार्य कुन्दकुन्द-रचित उपर्युक्त कृतियों में से 'प्रवचनसार' जैनधर्म-दर्शन को प्रस्तुत करनेवाली शौरसेनी भाषा में रचित एक रचना है। इसमें कुल 275 गाथाएँ हैं। इस ग्रन्थ में तीन अधिकार हैं। 1. ज्ञान-अधिकार 2. ज्ञेय-अधिकार 3. चारित्र-अधिकार। पहले **ज्ञान**–अधिकार में 92 गाथाएँ हैं। इसमें आत्मा और केवलज्ञान, इन्द्रिय और अतीन्द्रिय सुख, शुभ, अशुभ और शुद्ध उपयोग तथा मोहक्षय आदि का प्ररूपण है। दूसरे **ज्ञेय**–अधिकार में 108 गाथाएँ हैं। इसमें द्रव्य, गुण और पर्याय का स्वरूप, मूर्त और अमूर्त द्रव्यों का विवेचन, जीव का लक्षण, जीव और पुद्गल का संबंध, निश्चय और व्यवहार नय का अविरोध और शुद्धात्मा आदि का प्रतिपादन है। तीसरे **चारित्र**–अधिकार में 75 गाथाएँ हैं। इसमें आगम ज्ञान का महत्व, श्रमण का लक्षण, मोक्षतत्व आदि का निरूपण है।

'प्रवचनसार' का हिन्दी अनुवाद अत्यन्त सहज, सुबोध एवं नवीन शैली में किया गया है जो पाठकों के लिए अत्यन्त उपयोगी होगा। इसमें गाथाओं के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शब्दों का अर्थ व अन्वय दिया गया है। इसके पश्चात संज्ञा-कोश, क्रिया-कोश, कृदन्त-कोश, विशेषण-कोश, सर्वनाम-कोश, अव्यय-कोश दिया गया है। पाठक **'प्रवचनसार'** के माध्यम से शौरसेनी प्राकृत भाषा व जैनधर्म-दर्शन का समुचित ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे, ऐसी आशा है।

प्रस्तुत पुस्तक के तीन अधिकारों में से केवल ज्ञान-अधिकार,खण्ड-1 प्रकाशित किया जा रहा है। अपभ्रंश भाषा के दार्शनिक साहित्य को आसानी से समझने और प्राकृत-अपभ्रंश की पाण्डुलिपियों के सम्पादन में प्रवचनसार का विषय सहायक होगा। श्रीमती शकुन्तला जैन, एम.फिल. ने बड़े परिश्रम से प्राकृत-अपभ्रंश भाषा सीखने-समझने के इच्छुक अध्ययनार्थियों के लिए **'प्रवचनसार (खण्ड-1)'** का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया है। अतः वे हमारी बधाई की पात्र हैं। आशा है कि वे प्रवचनसार के ज्ञेय-अधिकार व चारित्र-अधिकार को भी इसी प्रकार अनुवाद करके पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करेंगी।

पुस्तक-प्रकाशन के लिए अपभ्रंश साहित्य अकादमी के विद्वानों विशेषतया श्रीमती शकुन्तला जैन के आभारी हैं जिन्होंने **'प्रवचनसार(खण्ड-1)'**का हिन्दी-अनुवाद करके प्राकृत के पठन-पाठन को सुगम बनाने का प्रयास किया है। पृष्ठ संयोजन के लिए फ्रेण्ड्स कम्प्यूटर्स एवं मुद्रण के लिए जयपुर प्रिण्टर्स धन्यवादार्ह है।

जस्टिस नगेन्द्र कुमार जैन	**प्रकाशचन्द्र जैन**	**डॉ. कमलचन्द सोगाणी**
अध्यक्ष	मंत्री	संयोजक
प्रबन्धकारिणी कमेटी		जैनविद्या संस्थान समिति
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी		जयपुर

वीर निर्वाण संवत्-2539

13.07.2013

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ग्रन्थ एवं ग्रंथकार

संपादक की कलम से

आचार्य कुन्दकुन्द विश्व प्रसिद्ध आध्यात्मिक दार्शनिक हैं। आध्यात्मिक नैतिक-चारित्रवाद की संभावना को पुष्ट करने के लिए वे दार्शनिक अवधारणा को प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि पदार्थ मूलरूप से परिवर्तन स्वभाववाला होता है। जब जीव शुभ, अशुभ या शुद्ध भाव से रूपान्तर को प्राप्त होता है तो वह शुभ, अशुभ और शुद्ध होता है। इस लोक में परिवर्तन के बिना पदार्थ नहीं है और पदार्थ के बिना परिवर्तन नहीं है। पदार्थ द्रव्य-गुण-पर्याय में स्थित रहता है और वह अस्तित्ववान कहा गया है। आत्म द्रव्य पर इस अवधारणा को प्रयुक्त करते हुए आचार्य कहते हैं कि जब आत्मा शुद्ध क्रियाओं के संयोग से युक्त होता है तो मोक्ष सुख को प्राप्त करता है तथा जब वह शुभ क्रियाओं (देव, मुनि, गुरु भक्ति, दान, श्रेष्ठ आचरण, उपवासादि) में संलग्न होता है तो लौकिक, अलौकिक सुख प्राप्त करता है। जब वही आत्मा अशुभ क्रियाओं में संलग्न होता है तो परिणामस्वरूप खोटा मनुष्य और पशु होकर असहनीय दुःखों से घिर जाता है।

आध्यात्मिक-चारित्रवाद और शुद्धोपयोग समानार्थक है। आचार्य कुन्दकुन्द का कहना है कि शुद्धोपयोगी आत्माओं का सुख श्रेष्ठ, आत्मोत्पन्न, इन्द्रिय विषयों से परे, अनुपम, अनंत और शाश्वत होता है। शुद्धोपयोगी श्रमण की जीवन दृष्टि की व्याख्या करते हुए आचार्य का कथन है कि वह आसक्ति रहित (विगदरागो), सुख-दुःख में सम (समसुहदुक्खो), पदार्थ और आगम के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रहस्य को जाननेवाला होता है (सुविदिदपयत्थसुत्तो)। ऐसे श्रमण में एक विशेषता और उत्पन्न होती है कि वह ज्ञेय पदार्थों के अंत को प्राप्त कर लेता है (जादि परं णेयभूदाणं) अर्थात् वह सर्वज्ञ हो जाता है। अपने सामर्थ्य की अनाश्रित अभिव्यक्ति के कारण वह 'स्वयंभू' होता है, अपने मूलस्वरूप को प्राप्त कर लेता है (सो लद्धसहावो सव्वण्हू, हवदि सयंभू)। शुद्धोपयोग को दार्शनिक रूप से पुष्ट करते हुए आचार्य का प्रतिपादन है कि शुद्धोपयोग की उत्पत्ति विनाश-रहित और अशुद्धोपयोग का विनाश उत्पत्ति-रहित होता है। इस तरह से शुद्धोपयोग पर्याय की उत्पत्ति, अशुद्धोपयोग पर्याय का विनाश और आत्म द्रव्य की ध्रौव्यता उपदिष्ट है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि शुद्धोपयोगी आत्मा अतीन्द्रिय, सर्वज्ञ और अनंत सुखमय हो जाता है।

केवलज्ञान की अवधारणा

जैसा उपर्युक्त कहा गया है: शुद्धोपयोगी आत्मा केवलज्ञानी हो जाता है। प्रश्न यह है कि केवलज्ञान का स्वरूप क्या है? केवलज्ञान में समस्त द्रव्य-पर्यायें प्रत्यक्ष होती है, केवली उनको अवग्रह आदि क्रियाओं से नहीं जानते हैं। केवली के कुछ भी परोक्ष नहीं है (णत्थि परोक्खं किंचि)। केवली का ज्ञान सर्वव्यापक होता है, क्योंकि आत्मा ज्ञान प्रमाण हैं और ज्ञान ज्ञेय प्रमाण कहा गया है (णाणं तु सव्वगयं)। ज्ञानमय होने के कारण केवली को सर्वव्यापक कहा गया है और जगत के सब पदार्थ उनमें स्थित कहे गये हैं। यहाँ यह समझने योग्य है कि केवलज्ञानी के लिए पदार्थ ऐसे ही हैं, जैस रूपों के लिए चक्षु। ज्ञानी सब ज्ञेयों को जानता-देखता है, जैसे चक्षु रूपों को। सच तो यह है कि ज्ञान पदार्थों में व्याप्त होकर रहता है, जैसे दूध में डाला हुआ इन्द्रनील रत्न अपनी आभा से दूध

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में व्याप्त होकर रहता है। यह कहा गया है कि ज्ञानी पर पदार्थों को न तो ग्रहण करते हैं न छोड़ते हैं और न ही बदलते हैं। वे तो पदार्थों को **जानते–देखते** हैं (सो जाणदि पेच्छदि)। यहाँ यह नहीं कहा जा सकता है कि आत्मा **ज्ञान के द्वारा** जाननेवाला ज्ञायक होता है। किन्तु आत्मा स्वयं ही ज्ञान में रूपान्तरित होता है और समस्त पदार्थ ज्ञान में स्थित रहते हैं। आचार्य कुन्दकुन्द निःसंकोच यह बात कहते हैं कि- यदि अनुत्पन्न हुई और नष्ट हुई पर्याय ज्ञान में प्रत्यक्ष नहीं होती है (तो) निश्चय ही इस कारण उस ज्ञान को दिव्य कौन प्रतिपादन करेगा?

केवलज्ञान अतीन्द्रिय होता है। प्रश्न है कि अरिहंत अवस्था में केवली की क्रियाएँ कैसी होती है? उत्तर में कहा गया है कि अरहंत अवस्था में अरिहंतों का उठना, बैठना, खड़े रहना और उपदेश देना स्वाभाविक रूप से घटित होता है, जैसे स्त्रियों में मातृत्व स्वाभाविक रूप से घटित होता है। यद्यपि अरिहंत पुण्य के प्रभाव से होते हैं, किन्तु उनकी क्रियाएँ आसक्ति-रहित कर्मक्षय के निमित्त होती है, इसलिए उनको क्षायिकी क्रिया कहते हैं। यहाँ यह समझना चाहिये कि यदि ज्ञानी का ज्ञान पदार्थों को अवलम्बन करके क्रम से उत्पन्न होता है तो वह ज्ञान न ही नित्य, न क्षायिक और न ही सर्वव्यापक होता है। आश्चर्य है कि! दिव्य ज्ञान तीन काल में चिरस्थायी असमान सभी जगह स्थित नाना प्रकार के समस्त पदार्थों को एक साथ जानता है। यह दिव्य ज्ञान की ही महिमा है। आत्मा उन पदार्थों को जानता हुआ भी उन पदार्थों को न ही रूपान्तरित करता है, न ग्रहण करता है और न ही उन पदार्थों में उत्पन्न होता है, इसलिए वह आत्मा अबंधक (कर्मबंध नहीं करनेवाला) कहा गया है।

यहाँ यह जानना आवश्यक है कि जैसे ज्ञान अतीन्द्रिय और इन्द्रिय भेदवाला होता है, उसी प्रकार सुख भी अतीन्द्रिय और इन्द्रिय भेदवाला होता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है। जो ज्ञान स्वयं ही उत्पन्न हुआ है, पूर्ण है, शुद्ध है, अनन्त पदार्थों में फैला हुआ है, इन्द्रियों से जानने की पद्धति अवग्रह आदि के प्रयोग से रहित है वह निश्चय ही अद्वितीय सुख कहा गया है। निश्चय ही जो केवलज्ञान है वह स्वयं में सुख है और उसका लोक में प्रभाव भी सुखरूप ही होता है। चूँकि उन केवली के घातिया कर्म विनाश को प्राप्त हुए हैं इसलिए उनके किसी प्रकार का दुःख नहीं कहा गया है।

केवली का ज्ञान पदार्थों (ज्ञेय) के अंत को पहुँचा हुआ है, उसका दर्शन लोक और अलोक में फैला हुआ है, उनके द्वारा समस्त अनिष्ट समाप्त किया गया है, परन्तु जो वांछित है, वह प्राप्त कर लिया गया है। शुभोपयोग से उत्पन्न होनेवाले विविध पुण्य देवों में भी विषयतृष्णा उत्पन्न करते हैं उन तृष्णाओं के कारण वे दुःखी रहते हैं। यह सच है कि इन्द्रियों से प्राप्त सुख पर की अपेक्षा रखनेवाला, अड़चनों सहित, हस्तक्षेप/समाप्त किया गया (परेशानी में डालनेवाले) कर्मबंध का कारण है और (अन्त में) कष्टदायक होता है। इसलिए वह सुख अन्तिम परिणाम में दुःख ही है।

यह निर्विवाद है कि पाप दुखोत्पादक और पुण्य सुखोत्पादक है। व्यक्ति और सामाजिक विकास के दृष्टिकोण से पुण्य बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। यहाँ तक कि अरहंत अवस्था पुण्य के प्रभाव से ही होती है, किन्तु पुण्य से उत्पन्न सुख, पराश्रित, अड़चनों सहित, अन्त किया जा सकनेवाला और अन्तिम परिणाम में कष्टदायक होता है। आध्यात्मिक चारित्रवाद ऐसे सुख को जीवन में लाना चाहता है जो स्वआश्रित हो, अनुपम हो, अनन्त और शाश्वत हो। इसलिए आचार्य कुन्दकुन्द का कहना है कि पुण्य से उत्पन्न सुख **गहरेतल** पर दुखोत्पादक ही है। शुद्धोपयोग की साधना में यह बाधक है। अतः इसको

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किस तरह सर्वथा उपादेय कहा जा सकता है? आचार्य का कहना है कि जो व्यक्ति जीवन के परम प्रयोजन (परमार्थ) को जानकर संपत्ति/वस्तुओं/व्यक्तियों में आसक्ति को तिलांजलि दे देता है वह शुद्धोपयोगी हो जाता है।

शुद्धोपयोग की साधना

शुद्धोपयोग की साधना वास्तव में 'समता' की साधना है। यह ही आध्यात्मिक-चारित्रवाद है। यही धर्म है। समता का प्रारंभ निश्चय ही आध्यात्मिक जाग्रति/आत्मस्मरण से होता है। यह प्रारंभ इतना महत्त्वपूर्ण है कि **केवल शुभचारित्र** में प्रयत्नशील व्यक्ति शुद्धात्मा/शुद्धोपयोग को प्राप्त नहीं कर सकता है। शुद्धोपयोग में बाधक तत्त्व मोह है, किन्तु जो आत्मा को जानता है, उसमें जाग्रत है, उसका मोह (आत्मविस्मृति भाव) समाप्त हो जाता है। जिसने आत्मा के सम्यक् सार को समझ लिया है वह ही चारित्र धारण करके शुद्धात्मा को प्राप्त कर लेता है। सभी अरिहंतों ने इसी प्रकार मोक्ष प्राप्त किया है। मोह के चिन्ह हैः करुणा का अभाव, विषयों में आसक्ति और पदार्थ का अयथार्थ ज्ञान। इस मोह को नष्ट करने के लिए आगम का निरन्तर अध्ययन किया जाना अपेक्षित है। इसी से स्व और पर का समुचित ज्ञान संभव है। अन्त में आचार्य कुन्दकुन्द कहते हैं कि "जिसके द्वारा मोह दृष्टि नष्ट की गई है, जो आगम में कुशल हैं, जो वीतराग चारित्र में उद्यत है, वह महात्मा है, श्रमण है और वह ही इन विशेषणों से युक्त चलता-फिरता 'धर्म' है।"

◈◈◈

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रवचनसार को अच्छी तरह समझने के लिए गाथा के प्रत्येक शब्द जैसे- संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण, कृदन्त आदि के लिए व्याकरणिक विश्लेषण में प्रयुक्त संकेतों का ज्ञान होने से प्रत्येक शब्द का अनुवाद समझा जा सकेगा।

अ – अव्यय (इसका अर्थ = लगाकर लिखा गया है)

अक - अकर्मक क्रिया

अनि - अनियमित

कर्म - कर्मवाच्य

नपुं. - नपुंसकलिंग

पु. - पुल्लिंग

भूकृ - भूतकालिक कृदन्त

व - वर्तमानकाल

वकृ - वर्तमान कृदन्त

वि - विशेषण

विधि - विधि

विधिकृ - विधि कृदन्त

संकृ - संबंधक कृदन्त

सक - सकर्मक क्रिया

सवि - सर्वनाम विशेषण

स्त्री. - स्त्रीलिंग

हेकृ - हेत्वर्थक कृदन्त

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

•()- इस प्रकार के कोष्ठक में मूल शब्द रखा गया है।

•[()+()+().....] इस प्रकार के कोष्ठक के अन्दर + चिह्न शब्दों में संधि का द्योतक है। यहाँ अन्दर के कोष्ठकों में गाथा के शब्द ही रख दिये गये हैं।

•[()-()-().....] इस प्रकार के कोष्ठक के अन्दर '-' चिह्न समास का द्योतक है।

•{[()+()+().....]वि} जहाँ समस्त पद विशेषण का कार्य करता है वहाँ इस प्रकार के कोष्ठक का प्रयोग किया गया है।

•जहाँ कोष्ठक के बाहर केवल संख्या (जैसे 1/1, 2/1 आदि) ही लिखी है वहाँ उस कोष्ठक के अन्दर का शब्द '**संज्ञा**' है।

•जहाँ **कर्मवाच्य, कृदन्त** आदि प्राकृत के नियमानुसार नहीं बने हैं वहाँ कोष्ठक के बाहर '**अनि**' भी लिखा गया है।

क्रिया–रूप निम्न प्रकार लिखा गया है–

1/1 **अक** या **सक** - उत्तम पुरुष/एकवचन
1/2 **अक** या **सक** - उत्तम पुरुष/बहुवचन
2/1 **अक** या **सक** - मध्यम पुरुष/एकवचन
2/2 **अक** या **सक** - मध्यम पुरुष/बहुवचन
3/1 **अक** या **सक** - अन्य पुरुष/एकवचन
3/2 **अक** या **सक** - अन्य पुरुष/बहुवचन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विभक्तियाँ निम्न प्रकार लिखी गई हैं–

1/1 - प्रथमा/एकवचन
1/2 - प्रथमा/बहुवचन
2/1 - द्वितीया/एकवचन
2/2 - द्वितीया/बहुवचन
3/1 - तृतीया/एकवचन
3/2 - तृतीया/बहुवचन
4/1 - चतुर्थी/एकवचन
4/2 - चतुर्थी/बहुवचन
5/1 - पंचमी/एकवचन
5/2 - पंचमी/बहुवचन
6/1 - षष्ठी/एकवचन
6/2 - षष्ठी/बहुवचन
7/1 - सप्तमी/एकवचन
7/2 - सप्तमी/बहुवचन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रवचनसार

(पवयणसारो)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रवचनसार

(पवयणसारो)

ज्ञान-अधिकार (खण्ड-1)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

1. **एस सुरासुरमणुसिंदवंदिदं धोदघाइकम्ममलं।**
पणमामि वड्ढमाणं तित्थं धम्मस्स कत्तारं।।

एस	(एत) 1/1 सवि	यह
सुरासुरमणुसिंदवंदिदं	[(सुर)+(असुरमणुसिंदवंदिदं)]	
	[(सुर)-(असुर)-(मणुसिंद)-(वंदिद) भूकृ 2/1]	देवताओं, दानवों, राजाओं द्वारा वंदना किये गये
धोदघाइकम्ममलं	[(धोद) भूकृ अनि-(घाइकम्म)-(मल) 2/1]	धो दिया घातिया कर्मरूपी मैल को
पणमामि	(पणम) व 1/1 सक	प्रणाम करता हूँ
वड्ढमाणं	(वड्ढमाण) 2/1	श्री वर्धमान को
तित्थं	(तित्थ) 2/1 वि	तारने में समर्थ
धम्मस्स	(धम्म) 6/1	धर्म के
कत्तारं	(कत्तार) 2/1 वि	करनेवाले (उपदेशक)

अन्वय– एस वड्ढमाणं पणमामि सुरासुरमणुसिंदवंदिदं धोदघाइकम्ममलं तित्थं धम्मस्स कत्तारं।

अर्थ– यह (मैं) श्री वर्धमान (तीर्थंकर) को प्रणाम करता हूँ, (ऐसे) (वर्धमान) (को) (जो) देवताओं, दानवों और राजाओं द्वारा वंदना किये गये (हैं), (जिन्होंने) घातिया कर्मरूपी मैल को धो दिया (है), (जो) (प्राणियों को) तारने में समर्थ (हैं) (तथा) (जो) धर्म के करनेवाले (उपदेशक) (हैं)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

2. **सेसे पुण तित्थयरे ससव्वसिद्धे विसुद्धसब्भावे।**
समणे य णाणदंसणचरित्ततववीरियायारे।।

सेसे	(सेस) 2/2 वि	शेष
पुण	अव्यय	इसके अनन्तर
तित्थयरे	(तित्थयर) 2/2	तीर्थंकरों को
ससव्वसिद्धे	[(स) वि- (सव्व) सवि- (सिद्ध) 2/2 वि]	विद्यमान सभी सिद्धों को
विसुद्धसब्भावे	{[(विसुद्ध) वि-(सब्भाव) 2/2] वि}	विशुद्ध स्वभाववाले
समणे	(समण) 2/2	श्रमणों को
य	अव्यय	तथा
णाणदंसणचरित्त-तववीरियायारे	[(णाणदंसणचरित्ततववीरिय+आयारे)]	
	{[(णाण)-(दंसण)-(चारित्त)-(तव)-(वीरिय)-(आयार) 2/2] वि}	ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचारवाले

अन्वय- पुण सेसे तित्थयरे विसुद्धसब्भावे ससव्वसिद्धे य समणे णाणदंसणचरित्ततववीरियायारे।

अर्थ- इसके अनन्तर शेष तीर्थंकरों को, विशुद्ध स्वभाववाले विद्यमान सभी सिद्धों को तथा श्रमणों (आचार्य, उपाध्याय, और साधुओं) को (प्रणाम करता हूँ) (जो) (कि) ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार (और) वीर्याचारवाले (हैं)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

3. **ते ते सव्वे समगं समगं पत्तेगमेव पत्तेगं।**
वंदामि य वट्टंते अरहंते माणुसे खेत्ते।।

ते	(उन) 2/2 सवि	उन को
ते	(उन) 2/2 सवि	उन को
सव्वे	(सव्व) 2/2 सवि	सभी को
समगं	अव्यय	साथ
समगं	अव्यय	साथ
पत्तेगमेव	[(पत्तेगं)+(एव)]	
	पत्तेगं (अ) = पृथक-पृथक	पृथक-पृथक
	एव (अ) = भी	भी
पत्तेगं	(पत्तेग) 2/1 वि	प्रत्येक को
वंदामि	(वंद) व 1/1 सक	प्रणाम करता हूँ
य	अव्यय	और
वट्टंते	(वट्ट) व 3/2 सक	विद्यमान हैं
अरहंते	(अरहंत) 2/2	अरिहंतों को
माणुसे	(माणुस) 7/1	मनुष्य
खेत्ते	(खेत्ते) 7/1	क्षेत्र में

अन्वय– य ते ते सव्वे अरहंते माणुसे खेत्ते वट्टंते समगं समगं पत्तेगमेव पत्तेगं वंदामि।

अर्थ– और उन-उन सभी अरिहंतो को (जो) मनुष्य क्षेत्र में विद्यमान हैं, साथ-साथ (और) पृथक-पृथक भी प्रत्येक को प्रणाम करता हूँ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

4. किच्चा अरहंताणं सिद्धाणं तह णमो गणहराणं।
अज्झावयवग्गाणं साहूणं चेव सव्वेसिं।।

किच्चा	(किच्चा) संकृ अनि	करके
अरहंताणं[1]	(अरहंत) 4/2	अरिहंतों को
सिद्धाणं[1]	(सिद्ध) 4/2 वि	सिद्धों को
तह	अव्यय	तथा
णमो[1]	अव्यय	नमस्कार
गणहराणं[1]	(गणहर)[2] 4/2	गणधरों को
अज्झावयवग्गाणं[1]	[(अज्झावय)[3]-(वग्ग)] 4/2	अध्यापक वर्ग को
साहूणं[1]	(साहू) 4/2	साधुओं को
चेव	[(च)+(एव)]	
	च (अ) = और	और
	एव (अ) = ही	ही
सव्वेसिं[1]	(सव्व) 4/2 संवि	सभी

अन्वय–अरहंताणं सिद्धाणं गणहराणं अज्झावयवग्गाणं तह सव्वेसिं साहूणं णमो किच्चा चेव।

अर्थ– अरिहंतों को, सिद्धों को, गणधरों (आचार्यों) को, अध्यापक (उपाध्याय) वर्ग को तथा सभी साधुओं को नमस्कार करके और.....

---

1. 'णमो' के योग में चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग होता है।
2. यहाँ 'गणहर' शब्द आचार्य विशेष का वाचक है।
3. यहाँ 'अज्झावय' शब्द उपाध्याय का वाचक है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

5. **तेसिं विसुद्धदंसणणाणपहाणासमं समासेज्ज।**
उवसंपयामि सम्मं जत्तो णिव्वाणसंपत्ती।।

तेसिं	(त) 6/2 सवि	उनके
विसुद्धदंसणणाण-	[(विसुद्धदंसणणाणपहाण)+	
पहाणासमं	(आसमं)]	
	{[(विसुद्ध) वि-(दंसण)-	विशुद्ध-दर्शन, ज्ञान
	(णाण)-(पहाण) वि-	प्रधान-अवस्था को
	(आसम) 2/1] वि}	
समासेज्ज	(समासेज्ज) संकृ अनि	उपलब्ध करके
उवसंपयामि	(उवसंपय) व 1/1 सक	स्वीकार करता हूँ
सम्मं	(सम्म) 2/1	समत्व को
जत्तो	अव्यय	क्योंकि
णिव्वाणसंपत्ती	[(णिव्वाण)-(संपत्ति)	निर्वाण की
	1/1]	प्राप्ति

अन्वय–तेसिं विसुद्धदंसणणाणपहाणासमं समासेज्ज सम्मं उवसंपयामि जत्तो णिव्वाणं संपत्ती।

अर्थ–.....उनके ही (समान) विशुद्ध-दर्शन (सम्यग्दर्शन), ज्ञान (सम्यग्ज्ञान) प्रधान-अवस्था को उपलब्ध करके (मैं) समत्व (सम्यक् चारित्र) को स्वीकार करता हूँ, क्योंकि (उससे ही) निर्वाण की प्राप्ति (होती है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

6. संपज्जदि णिव्वाणं देवासुरमणुयरायविहवेहिं।
जीवस्स चरित्तादो दंसणणाणप्पहाणादो।।

संपज्जदि	(संपज्ज) व 3/1 अक	प्राप्त होता है
णिव्वाणं	(णिव्वाण) 1/1	निर्वाण
देवासुरमणुयराय-	[(देव)+(असुरमणुयराय-	
विहवेहिं[1]	विहवेहिं)]	
	[(देव)-(असुर)-	देवताओं, दानवों,
	(मणुयराय)-	मनुष्यों के स्वामियों के
	(विहव) 3/2]	वैभव होने पर
जीवस्स	(जीव) 4/1	जीव के लिए
चरित्तादो	(चरित्त) 5/1	चारित्र से
दंसणणाणप्पहाणादो	[(दंसण)-(णाण)-	दर्शन, ज्ञान प्रधान से
	(प्पहाण) 5/1 वि]	

अन्वय– देवासुरमणुयरायविहवेहिं जीवस्स दंसणणाणप्पहाणादो चरित्तादो णिव्वाणं संपज्जदि।

अर्थ– देवताओं, दानवों, मनुष्यों के स्वामियों के (सराग चारित्ररूपी) वैभव होने पर (भी) जीव के लिए दर्शन, ज्ञान प्रधान चारित्र (वीतराग चारित्र) से (ही) निर्वाण प्राप्त होता है।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर तृतीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अर्थ– देवताओं, दानवों, मनुष्यों के स्वामियों के (अरिहंत अवस्था में) वैभव (लौकिक और अलौकिक) के साथ जीव के लिए दर्शन, ज्ञान प्रधान चारित्र से निर्वाण (परम-आनन्द) प्राप्त होता है।

यहाँ **'साथ'** के योग में तृतीया विभक्ति का प्रयोग हुआ है।

अतः विहवेहिं का अर्थ है- वैभव के साथ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

7. **चारित्तं खलु धम्मो धम्मो जो सो समो त्ति णिद्दिट्ठो ।**
मोहक्खोहविहीणो परिणामो अप्पणो हु समो।।

चारित्तं	(चारित्त) 1/1	चारित्र
खलु	अव्यय	वास्तव में
धम्मो	(धम्म) 1/1	धर्म
धम्मो	(धम्म) 1/1	धर्म
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
सो	(त) 1/1 सवि	वह
समो त्ति	[(सम)+(इति)]	
	समो (सम) 1/1	समत्व
	इति (अ) = ही	ही
णिद्दिट्ठो	(णिद्दिट्ठ) भूकृ 1/1 अनि	कहा गया
मोहक्खोहविहीणो	[(मोह)-(क्खोह)-	आत्मविस्मृति तथा
	(विहीण) भूकृ 1/1 अनि]	व्याकुलता रहित
परिणामो	(परिणाम) 1/1	परिणाम
अप्पणो	(अप्प) 6/1	आत्मा का
हु	अव्यय	निश्चय ही
समो	(सम) 1/1	समत्व

अन्वय– खलु चारित्तं धम्मो जो धम्मो सो समो त्ति णिद्दिट्ठो समो हु मोहक्खोहविहीणो अप्पणो परिणामो।

अर्थ– वास्तव में चारित्र धर्म (है)। जो धर्म (है) वह समत्व ही कहा गया (है)। समत्व निश्चय ही आत्मविस्मृतिरहित (मूर्च्छारहित) तथा व्याकुलतारहित (हर्ष, शोक आदि द्वन्द्वात्मक प्रवृत्ति से रहित) आत्मा का परिणाम (भाव) (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

8. परिणमदि जेण दव्वं तक्कालं तम्मय त्ति पण्णत्तं।
तम्हा धम्मपरिणदो आदा धम्मो मुणेदव्वो।।

परिणमदि	(परिणम) व 3/1 अक	रूपान्तरण को प्राप्त होता है
जेण	(ज) 3/1 सवि	जिससे
दव्वं	(दव्व) 1/1	द्रव्य
तक्कालं	अव्यय	उसी समय
*तम्मय[1] त्ति	[(तम्मय)+ (इति)]	
(मूल शब्द)	तम्मयं (तम्मय) 1/1 वि	उसरूप
	इति (अ) = ही	ही
पण्णत्तं	(पण्णत्त) भूकृ 1/1 अनि	कहा गया
तम्हा	अव्यय	इसलिये
धम्मपरिणदो	[(धम्म)-(परिणद) भूकृ 1/1 अनि]	धर्म (समत्व) से परिवर्तित
आदा	(आद) 1/1	आत्मा
धम्मो	(धम्म) 1/1	धर्म (समत्व)
मुणेदव्वो	(मुण) विधिकृ 1/1	समझा जाना चाहिये

अन्वय– जेण दव्वं परिणमदि तक्कालं तम्मय त्ति पण्णत्तं तम्हा धम्मपरिणदो आदा धम्मो मुणेदव्वो।

अर्थ– (जिस समय) जिस (भाव) से द्रव्य रूपान्तरण को प्राप्त होता है उसी समय उसरूप ही कहा गया (है)। इसलिए धर्म (समत्व) से परिवर्तित आत्मा धर्म (समत्व) (ही) समझा जाना चाहिये।

---

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 517)

1. यहाँ छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'तम्मयं' के स्थान पर 'तम्मय' किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

9. जीवो परिणमदि जदा सुहेण असुहेण वा सुहो असुहो।
सुद्धेण तदा सुद्धो हवदि हि परिणामसब्भावो।।

जीवो	(जीव) 1/1	जीव
परिणमदि	(परिणम) व 3/1 अक	रूपान्तरण को प्राप्त होता है
जदा	अव्यय	जब
सुहेण	(सुह) 3/1 वि	शुभ से
असुहेण	(असुह) 3/1 वि	अशुभ से
वा	अव्यय	या
सुहो	(सुह) 1/1 वि	शुभ
असुहो	(असुह) 1/1 वि	अशुभ
सुद्धेण	(सुद्ध) 3/1 वि	शुद्ध से
तदा	अव्यय	तब
सुद्धो	(सुद्ध) 1/1 वि	शुद्ध
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
हि	अव्यय	निश्चय ही
परिणामसब्भावो	{[(परिणाम)-(सब्भाव) 1/1] वि}	परिवर्तन-स्वभाववाला

अन्वय- जीवो परिणामसब्भावो जदा सुहेण असुहेण वा सुद्धेण परिणमदि तदा हि सुहो असुहो सुद्धो हवदि।

अर्थ- जीव परिवर्तन-स्वभाववाला (होता है)। जब (वह) शुभ, अशुभ या शुद्ध (भाव) से रूपान्तरण को प्राप्त होता है तब (क्रम से) (वह) निश्चय ही शुभ (या) अशुभ (या) शुद्ध होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

10. णत्थि विणा परिणामं अत्थो अत्थं विणेह परिणामो।
दव्वगुणपज्जयत्थो अत्थो अत्थित्तणिव्वत्तो।।

णत्थि	[(ण)+(अत्थि)]	
	ण (अ) = नहीं	नहीं
	अत्थि (अ) = है	है
विणा	अव्यय	बिना
परिणामं[1]	(परिणाम) 2/1	परिवर्तन के
अत्थो	(अत्थ) 1/1	पदार्थ
अत्थं[1]	(अत्थ) 2/1	पदार्थ के
विणेह	[(विणा)+(इह)]	
	विणा (अ) = बिना	बिना
	इह (अ) = इस लोक में	इस लोक में
परिणामो	(परिणाम) 1/1	परिवर्तन
दव्वगुणपज्जयत्थो	[(दव्व) -(गुण)-	द्रव्य-गुण-पर्याय
	(पज्जायत्थ→पज्जयत्थ)[2]	में स्थित/रहनेवाला
	1/1 वि]	
अत्थो	(अत्थ) 1/1	पदार्थ
अत्थित्तणिव्वत्तो	[(अत्थित्त)-(णिव्वत्त)	अस्तित्व/सत्त्व से
	भूकृ 1/1 अनि]	बना हुआ

अन्वय– इह अत्थो परिणामो विणा णत्थि परिणामं अत्थं विणा अत्थो दव्वगुणपज्जयत्थो अत्थित्तणिव्वत्तो।

अर्थ– इस लोक में पदार्थ परिवर्तन के बिना नहीं है, परिवर्तन पदार्थ के बिना (नहीं है)। (इसलिए) पदार्थ द्रव्य-गुण-पर्याय (परिवर्तन) में स्थित/रहनेवाला होता है। (और) (वह) (पदार्थ) अस्तित्व/सत्त्व से बना हुआ (कहा गया है) अर्थात् (अस्तित्ववान है) (अतः सत्- द्रव्य-गुण-पर्यायमय होता है)।

---

1. 'बिना' के साथ द्वितीया, तृतीया तथा पंचमी विभक्ति का प्रयोग होता है।
2. यहाँ छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'पज्जायत्थ' के स्थान पर 'पज्जयत्थ' किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

11. धम्मेण परिणदप्पा अप्पा जदि सुद्धसंपयोगजुदो।
पावदि णिव्वाणसुहं सुहोवजुत्तो व सग्गसुहं।।

धम्मेण	(धम्म) 3/1	स्वभाव से (वीतराग चारित्र से) (सराग चारित्र से)
परिणदप्पा	[(परिणद)+(अप्पा)] [(परिणद) भूकृ अनि- (अप्प) 1/1]	परिवर्तित/रूपान्तरित आत्मा
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा
जदि	अव्यय	यदि
सुद्धसंपयोगजुदो	[(सुद्ध) वि-(संपयोग)- (जुद) भूकृ 1/1 अनि]	शुद्ध (क्रियाओं) के संयोग से युक्त
पावदि	(पाव) व 3/1 सक	प्राप्त करता है
णिव्वाणसुहं	[(णिव्वाण)-(सुह) 2/1]	मोक्ष सुख को
सुहोवजुत्तो	[(सुह) वि-(उवजुत्त) भूकृ 1/1 अनि]	शुभ (क्रियाओं) में संलग्न
व	अव्यय	तथा
सग्गसुहं	[(सग्ग)-(सुह) 2/1]	स्वर्ग सुख को

अन्वय– अप्पा धम्मेण परिणद जदि अप्पा सुद्धसंपयोगजुदो णिव्वाणसुहं पावदि व सुहोवजुत्तो सग्गसुहं।

अर्थ– (यह सच है कि) आत्मा स्वभाव से परिवर्तित/रूपान्तरित (होता है)। यदि (वह) आत्मा शुद्ध (क्रियाओं) के संयोग से युक्त (होता है) (तो) मोक्ष सुख को प्राप्त करता है तथा (यदि वह) शुभ (क्रियाओं) में संलग्न (होता है) (तो) स्वर्ग सुख को (प्राप्त करता है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अर्थ– यदि आत्मा वीतराग चारित्र से रूपान्तरित (होता है) (तो) (वह) शुद्ध (क्रियाओं) के संयोग से युक्त आत्मा मोक्ष सुख को पाता है। यदि आत्मा सराग चारित्र से रूपान्तरित (होता है) (तो) (वह) शुभ (क्रियाओं) में संलग्न आत्मा स्वर्ग सुख को पाता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

12. असुहोदयेण आदा कुणरो तिरियो भवीय णेरइयो।
दुक्खसहस्सेहिं सदा अभिंधुदो भमदि अच्चंतं।।

असुहोदयेण	[(असुह)+(उदयेण)]	
	[(असुह) वि-(उदय) 3/1]	अशुभ कर्म के परिणाम से
आदा	(आद) 1/1	आत्मा
कुणरो	(कुणर) 1/1	खोटा मनुष्य
तिरियो	(तिरिय) 1/1	पशु, पक्षी आदि प्राणी
भवीय	(भव→भविय→भवीय) संकृ	होकर
	(छन्द की पूर्ति हेतु 'इ' का 'ई')	
णेरइयो	(णेरइय) 1/1 वि	नरक में उत्पन्न
दुक्खसहस्सेहिं	[(दुक्ख)-(सहस्स) 3/2]	हजारों दुःखों से
सदा	अव्यय	हमेशा
अभिंधुदो[1]	(अभिंधुद) भूकृ 1/1 अनि	अत्यधिक रूप से पकड़ा गया
भमदि	(भम) व 3/1 सक	भ्रमण करता है
अच्चंतं	(अच्चंत) 1/1 वि	अत्यन्त

अन्वय– असुहोदयेण आदा कुणरो तिरियो णेरइयो भवीय सदा दुक्खसहस्सेहिं अभिंधुदो अच्चंतं भमदि।

अर्थ– अशुभ कर्म के परिणाम से आत्मा खोटा मनुष्य, पशु, पक्षी आदि प्राणी (तिर्यंच) नरक में उत्पन्न (नारकी) होकर हमेशा हजारों दुःखों से अत्यधिक रूप से पकड़ा गया (होता है) (और) (संसार में) अत्यन्त भ्रमण करता है।

---

1. यहाँ अनुस्वार का आगम हुआ है।
यहाँ 'अभिंधुदो' के स्थान पर 'अभिद्दुयो' पाठ लेते हैं तो उसका अर्थ होगा 'हैरान किया गया'।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

13. **अइसयमादसमुत्थं विसयातीदं अणोवममणंतं।**
अव्वुच्छिण्णं च सुहं सुद्धुवओगप्पसिद्धाणं।।

अइसयमादसमुत्थं	[(अइसयं)+(आदसमुत्थं)]	
	अइसयं (अइसय) 1/1 वि	श्रेष्ठ
	[(आद)-(समुत्थ) 1/1 वि]	आत्मा से उत्पन्न
विसयातीदं	[(विसय)+(अतीदं)]	
	[(विसय)-(अतीद) 1/1 वि]	इन्द्रिय-विषयों से परे
अणोवममणंतं	[(अणोवमं)+(अणंतं)]	
	अणोवमं (अणोवम) 1/1 वि	अनुपम
	अणंतं (अणंत) 1/1 वि	अनंत
अव्वुच्छिण्णं	(अव्वुच्छिण्ण) 1/1 वि	सतत
च	अव्यय	और
सुहं	(सुह) 1/1	सुख
सुद्धुवओगप्पसिद्धाणं	[(सुद्ध)+(उवओगप्पसिद्धाणं)]	
	[(सुद्ध) वि-(उवओग)-	शुद्धोपयोग से विभूषित
	(प्पसिद्ध) भूक 6/2 अनि]	(आत्माओं) का

अन्वय– सुद्धुवओगप्पसिद्धाणं सुहं अइसयमादसमुत्थं विसयातीदं अणोवममणंतं च अव्वुच्छिण्णं।

अर्थ– शुद्धोपयोग से विभूषित (आत्माओं) का सुख श्रेष्ठ, आत्मा से उत्पन्न, इन्द्रिय-विषयों से परे, अनुपम, अनंत और सतत (होता है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

14. सुविदिदपयत्थसुत्तो संजमतवसंजुदो विगदरागो।
समणो समसुहदुक्खो भणिदो सुद्धोवओगो त्ति।।

सुविदिदपयत्थसुत्तो	[(सु) अ-(विदिद) भूकृ अनि (पयत्थ)-(सुत्त) 1/1]	पूरी तरह से जान लिया गया पदार्थ और आगम
संजमतवसंजुदो	[(संजम)-(तव)-(संजुद) भूकृ 1/1 अनि]	संयम और तप से संयुक्त
विगदरागो	[(विगद) भूकृ अनि-(राग) 1/1]	आसक्ति-रहित
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
समसुहदुक्खो	[(सम) वि-(सुह)-(दुक्ख)1/1]	समान सुख-दुःख
भणिदो	(भण→भणिद) भूकृ 1/1	कहा गया
सुद्धोवओगो त्ति	[(सुद्ध)+(उवओगो)+(इति)]	
	[(सुद्ध) वि-(उवओग) 1/1]	शुद्ध उपयोग
	इति (अ) =	समाप्तिसूचक

अन्वय– सुविदिदपयत्थसुत्तो संजमतवसंजुदो विगदरागो समसुहदुक्खो सुद्धोवओगो त्ति समणो भणिदो।

अर्थ–(जिसके द्वारा) पदार्थ और आगम पूरी तरह से जान लिया गया (है), (जो) संयम और तप से संयुक्त (है), (जो) आसक्ति-रहित (है), (जिसके लिए) सुख-दुःख समान (है), (जिसका) उपयोग शुद्ध है- (वह) श्रमण कहा गया (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

15. उवओगविसुद्धो जो विगदावरणंतरायमोहरओ।
भूदो सयमेवादा जादि परं णेयभूदाणं।।

उवओगविसुद्धो	[(उवओग)-(विसुद्ध) 1/1 वि]	उपयोग से शुद्ध
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
विगदावरणंतराय-मोहरओ	[(विगद)+(आवरण)+(अंतरायमोहरओ)]	
	[(विगद) भूकृ अनि-(आवरण)-(अंतराय)-(मोहरअ) 1/1]	आवरण, अन्तराय, मोहरूपी रज नष्ट कर दी गई
भूदो	(भूद) भूकृ 1/1 अनि	हुआ
सयमेवादा	[(सयं)+(एव)+(आदा)]	
	सयं (अ)= स्वयं	स्वयं
	एव (अ)= ही	ही
	आदा (आद) 1/1	आत्मा
जादि	(जा) व 3/1 सक	प्राप्त कर लेता है
परं	(पर) 2/1 वि	पार को
णेयभूदाणं	[(णेय) विधिकृ अनि-(भूद) 6/2]	ज्ञेय पदार्थों के

अन्वय– जो आदा सयं एव उवओगविसुद्धो भूदो आवरण अंतराय मोहरओ विगद णेयभूदाणं परं जादि।

अर्थ– जो आत्मा स्वयं ही उपयोग से शुद्ध हुआ (है) (जिसके द्वारा) आवरण (ज्ञानावरण, दर्शनावरण), अंतराय और मोहरूपी रज (धूल) नष्ट कर दी गई (है) (वह)(आत्मा) (स्वयं ही) ज्ञेय पदार्थों के पार (अंत) को प्राप्त कर लेता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

16. तह सो लद्धसहावो सव्वण्हू सव्वलोगपदिमहिदो।
भूदो सयमेवादा हवदि सयंभु त्ति णिद्दिट्ठो।।

तह	अव्यय	तथा
सो	(त) 1/1 सवि	वह
लद्धसहावो	[(लद्ध) भूकृ अनि-(सहाव) 1/1]	स्वभाव प्राप्त कर लिया गया
सव्वण्हू	(सव्वण्हु) 1/1 वि	सर्वज्ञ
सव्वलोगपदिमहिदो	[(सव्व) सवि-(लोग)-(पदि) (मह→महिद) भूकृ 1/1]	समस्त लोक के अधिपतियों द्वारा पूजा गया
भूदो	(भूद) भूकृ 1/1 अनि	हुआ
सयमेवादा	[(सयं)+(एव)+(आदा)]	
	सयं (अ)= स्वयं	स्वयं
	एव (अ)= ही	ही
	आदा (आद) 1/1	आत्मा
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
सयंभु त्ति	[(सयंभु)+(इति)]	
	सयंभु[1] (सयंभू) 1/1	स्वयंभू
	इति (अ) = इस प्रकार	इस प्रकार
णिद्दिट्ठो	(णिद्दिट्ठ) भूकृ 1/1 अनि	कहा गया

अन्वय- लद्धसहावो सव्वण्हू सव्वलोगपदिमहिदो तह सयमेव भूदो सो आदा सयंभु हवदि त्ति णिद्दिट्ठो।

अर्थ- (जिसके द्वारा) (मूल) स्वभाव प्राप्त कर लिया गया (है), (जो) सर्वज्ञ (है), (जो) समस्त लोक के अधिपतियों द्वारा पूजा गया (है) तथा (जो) स्वयं ही हुआ (है)- वह आत्मा स्वयंभू होता है।(जो) इस प्रकार कहा गया (है)।

---

1. सयंभु- आगे संयुक्त अक्षर आने से दीर्घ का ह्रस्व हुआ है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

17. **भंगविहीणो य भवो संभवपरिवज्जिदो विणासो हि।**
विज्जदि तस्सेव पुणो ठिदिसंभवणाससमवायो।।

भंगविहीणो	[(भंग)-(विहीण) भूकृ 1/1 अनि]	विनाश-रहित
य	अव्यय	और
भवो	(भव) 1/1	उत्पत्ति
संभवपरिवज्जिदो	[(संभव)-(परिवज्ज→ परिवज्जिद) भूकृ 1/1]	उत्पत्ति-रहित
विणासो	(विणास) 1/1	विनाश
हि	अव्यय	निश्चय ही
विज्जदि	(विज्ज) व 3/1 अक	होता है
तस्सेव	[(तस्स)+(एव)]	
	तस्स (त) 6/1 सवि	उसके
	एव (अ) = ही	ही
पुणो	अव्यय	फिर
ठिदिसंभव-	[(ठिदि)-(संभव)-	स्थिति, उत्पत्ति और
णाससमवायो	(णास)-(समवाय) 1/1]	विनाश का अविच्छिन्न संयोग

अन्वय- भवो भंगविहीणो य विणासो संभवपरिवज्जिदो हि विज्जदि तस्सेव पुणो ठिदिसंभवणाससमवायो।

अर्थ- (आत्मा के शुद्धोपयोग की) उत्पत्ति विनाश-रहित और (आत्मा के अशुद्धोपयोग का) विनाश उत्पत्ति-रहित निश्चय ही होता है। उसके ही फिर स्थिति (ध्रौव्य), उत्पत्ति (उत्पाद) और विनाश (व्यय) का अविच्छिन्न संयोग (विद्यमान है) अर्थात् (शुद्धोपयोग पर्याय की उत्पत्ति, अशुद्धोपयोग पर्याय का विनाश और आत्म द्रव्य की ध्रौव्यता)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

18. उप्पादो य विणासो विज्जदि सव्वस्स अट्ठजादस्स।
पज्जाएण दु केणवि अट्ठो खलु होदि सब्भूदो।।

उप्पादो	(उप्पाद) 1/1	उत्पाद
य	अव्यय	और
विणासो	(विणास) 1/1	विनाश
विज्जदि	(विज्ज) व 3/1 अक	होता है
सव्वस्स[1]	(सव्व) 6/1 सवि	समस्त
अट्ठजादस्स[1]	[(अट्ठ)-(जाद) 6/1]	पदार्थ-समूह में
पज्जाएण	(पज्जाय) 3/1	पर्याय से
दु	अव्यय	किन्तु
केणवि	केण (क) 3/1 सवि	किसी
	वि (अ) = निश्चय ही	निश्चय ही
अट्ठो	(अट्ठ) 1/1	पदार्थ
खलु	अव्यय	वास्तव में
होदि	(हो) व 3/1 अक	रहता है
सब्भूदो	(सब्भूद) 1/1 वि	विद्यमान

अन्वय– सव्वस्स अट्ठजादस्स केणवि पज्जाएण उप्पादो य विणासो विज्जदि दु अट्ठो खलु सब्भूदो होदि।

अर्थ– समस्त पदार्थ-समूह में निश्चय ही किसी (एक) पर्याय से उत्पाद और विनाश होता है किन्तु पदार्थ वास्तव में विद्यमान (अस्तित्वरूप) (ध्रौव्य) (ही) रहता है।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-134)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

19. पक्खीणघादिकम्मो अणंतवरवीरिओ अधिकतेजो।
जादो अणिंदिओ सो णाणं सोक्खं च परिणमदि।।

पक्खीणघादिकम्मो	[(पक्खीण) भूकृ अनि-(घादिकम्म) 1/1]	नष्ट किया गया घातिया कर्म
अणंतवरवीरिओ	{[(अणंत) वि-(वर) वि-(वीरिअ) 1/1] वि}	शाश्वत श्रेष्ठ सामर्थ्यवाला
अधिकतेजो	{[(अधिक) वि (तेज) 1/1] वि}	प्रचुर-कान्तिवाला
जादो	(जा) भूकृ 1/1	हुआ
अणिंदिओ	(अणिंदिअ) 1/1 वि	अतीन्द्रिय
सो	(त) 1/1 सवि	वह
णाणं	(णाण) 2/1	ज्ञान
सोक्खं	(सोक्ख) 2/1	सुख
च	अव्यय	और
परिणमदि	(परिणम) व 3/1 सक	प्राप्त करता है

अन्वय– पक्खीणघादिकम्मो अणंतवरवीरिओ अधिकतेजो अदिंदिओ जादो सो णाणं च सोक्खं परिणमदि।

अर्थ– (जिसके द्वारा) घातिया कर्म नष्ट किया गया (है), (जो) शाश्वत (है), श्रेष्ठ-सामर्थ्यवाला (है), (जो) प्रचुर-कान्तिवाला (है), (जो) अतीन्द्रिय हुआ (है), वह (स्वयंभू आत्मा) ज्ञान (केवलज्ञान) और (अनन्त) सुख को प्राप्त करता हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

20. सोक्खं वा पुण दुक्खं केवलणाणिस्स णत्थि देहगदं।
जम्हा अदिंदियत्तं जादं तम्हा दु तं णेयं।।

सोक्खं	(सोक्ख) 1/1	सुख
वा	अव्यय	या
पुण	अव्यय	और
दुक्खं	(दुक्ख) 1/1	दुःख
केवलणाणिस्स	(केवलणाणि) 4/1 वि	केवलज्ञानी के लिये
णत्थि	[(ण)+(अत्थि)]	
	ण (अ) = नहीं	नहीं
	अत्थि (अ) = है	है
देहगदं	[(देह)-(गद) भूकृ	शरीर पर
	1/1 अनि]	आश्रित
जम्हा	अव्यय	क्योंकि
अदिंदियत्तं	(अदिंदियत्त) 1/1	अतीन्द्रियता
जादं	(जा) भूकृ 1/1	उत्पन्न हुई
तम्हा	अव्यय	इसलिए
दु	अव्यय	पादपूरक
तं	(त) 1/1 सवि	वह
णेयं	(णेय) विधिकृ 1/1 अनि	जानने योग्य

अन्वय- पुण केवलणाणिस्स देहगदं सोक्खं वा दुक्खं णत्थि जम्हा अदिंदियत्तं जादं तम्हा दु तं णेयं।

अर्थ–और केवलज्ञानी के लिये शरीर पर आश्रित सुख या दुःख (ध्यातव्य) नहीं है, क्योंकि अतीन्द्रियता उत्पन्न हुई (है), इसलिए वह जानने योग्य (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

21. परिणमदो खलु णाणं पच्चक्खा सव्वदव्वपज्जाया।
सो णेव ते विजाणदि उग्गहपुव्वाहिं किरियाहिं।।

परिणमदो	(परिणामदो[1]→परिणमदो)(अ) पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	स्वभाव से
खलु	अव्यय	ही
णाणं[2]	(णाण) 2/1	ज्ञान में
पच्चक्खा	(पच्चक्ख) 1/2 वि	प्रत्यक्ष
सव्वदव्वपज्जाया	[(सव्व) सवि-(दव्व)-(पज्जाय) 1/2]	समस्त द्रव्य-पर्यायें
सो	(त) 1/1 सवि	वह
णेव	अव्यय	नहीं
ते	(त) 2/2 सवि	उनको
विजाणदि	(विजाण) व 3/1 सक	जानता है
उग्गहपुव्वाहिं	[(उग्गह)-(पुव्व) 3/2 वि]	अवग्रह से युक्त
किरियाहिं	(किरिया) 3/2	क्रियाओं से

अन्वय- परिणमदो खलु णाणं सव्वदव्वपज्जाया पच्चक्खा सो ते उग्गहपुव्वाहिं किरियाहि णेव विजाणदि।

अर्थ- स्वभाव से ही ज्ञान (केवलज्ञान) में समस्त द्रव्य-पर्यायें प्रत्यक्ष (हैं)। वे (केवलीभगवान) उनको अवग्रह से युक्त क्रियाओं से नहीं जानते हैं। (सामान्यतः अवग्रह पूर्वक ही ईहा, अवाय और धारणा क्रियायें होती हैं, किन्तु केवलीभगवान के इन क्रियाओं का अभाव होता है)।

---

1. यहाँ छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'परिणाम' का 'परिणम' किया गया है।
2. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

22. णत्थि परोक्खं किंचि वि समंत[1] सव्वक्खगुणसमिद्धस्स।
अक्खातीदस्स सदा सयमेव हि णाणजादस्स।।

णत्थि	अव्यय	नहीं है
परोक्खं	(परोक्ख) 1/1	परोक्ष
किंचि	अव्यय	कुछ
वि	अव्यय	भी
समंत[1](समंता)	अव्यय	चारों तरफ से
सव्वक्खगुण-	[(सव्व)+(अक्खगुणसमिद्धस्स)]	
समिद्धस्स[2]	[(सव्व) सवि-(अक्ख) (गुण)-(समिद्ध) 6/1 वि]	समस्त इन्द्रिय-गुणों से सम्पन्न होने के कारण
अक्खातीदस्स[2]	(अक्खातीद) 6/1 वि	इन्द्रियातीत होने के कारण
सदा	अव्यय	सदा
सयमेव	[(सयं)+(एव)]	
	सयं (अ)= स्वयं	स्वयं
	एव (अ)= ही	ही
हि	अव्यय	निश्चय ही
णाणजादस्स[2]	[(णाण)-(जाद) भूकृ 6/1]	ज्ञान में टिका हुआ होने के कारण

अन्वय- सदा अक्खातीदस्स समंत सव्वक्खगुणसमिद्धस्स सयमेव णाणजादस्स हि किंचि वि परोक्खं णत्थि।

अर्थ- सदा इन्द्रियातीत होने के कारण, चारों तरफ से समस्त इन्द्रिय-गुणों से सम्पन्न होने के कारण (और) स्वयं ही ज्ञान में टिके हुए होने के कारण निश्चय ही (केवलीभगवान के लिए) कुछ भी परोक्ष नहीं है।

---

1. यहाँ पाठ समंता होना चाहिये तभी छन्द पूर्ण होता है।
2. कभी-कभी तृतीया विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-134)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

23. आदा णाणपमाणं णाणं णेयप्पमाणमुद्दिट्ठं।
णेयं लोयालोयं तम्हा णाणं तु सव्वगयं।।

आदा	(आद) 1/1	आत्मा
णाणपमाणं	[(णाण)-(पमाण) 1/1]	ज्ञान प्रमाण
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
णेयप्पमाणमुद्दिट्ठं	[(णेयप्पमाणं)+(उद्दिट्ठं)]	
	[(णेय) विधिकृ अनि-(प्पमाण) 1/1]	ज्ञेय प्रमाण
	उद्दिट्ठं (उद्दिट्ठ) भूकृ 1/1 अनि	कहा गया
णेयं	(णेय) विधिकृ 1/1 अनि	जानने योग्य
लोयालोयं	[(लोय)+(अलोयं)]	
	[(लोय)-(अलोय) 1/1]	लोक और अलोक
तम्हा	अव्यय	इसलिए
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
तु	अव्यय	निश्चय ही
सव्वगयं	(सव्वगय) 1/1 वि	सर्वव्यापक

अन्वय– आदा णाणपमाणं णाणं णेयप्पमाणमुद्दिट्ठं णेयं लोयालोयं तम्हा णाणं तु सव्वगयं।

अर्थ– आत्मा ज्ञान प्रमाण (है)। ज्ञान ज्ञेय प्रमाण कहा गया (है)।(ज्ञान से) जानने योग्य लोक और अलोक (है) इसलिए ज्ञान निश्चय ही सर्वव्यापक (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

24. णाणप्पमाणमादा ण हवदि जस्सेह तस्स सो आदा।
हीणो वा अहिओ वा णाणादो हवदि धुवमेव।।

णाणप्पमाणमादा	[(णाणप्पमाणं)+(आदा)]	
	[(णाण)-(प्पमाण) 1/1]	ज्ञान-प्रमाण
	आदा (आद) 1/1	आत्मा
ण	अव्यय	नहीं
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
जस्सेह	[(जस्स)+(इह)]	
	जस्स (ज) 6/1 सवि	जिसके
	इह (अ) = इस लोक में	इस लोक में
तस्स	(त) 6/1 सवि	उसके
सो	(त) 1/1 सवि	वह
आदा	(आद) 1/1	आत्मा
हीणो	(हीण) 1/1 वि	कम
वा	अव्यय	अथवा
अहिओ	(अहिअ) 1/1 वि	अधिक
वा	अव्यय	पादपूरक
णाणादो	(णाण) 5/1	ज्ञान से
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
धुवमेव	[(धुवं)+(एव)]	
	धुवं (अ) = अवश्य	अवश्य
	एव (अ) = ही	ही

अन्वय- इह जस्स आदा णाणप्पमाणं ण हवदि तस्स सो आदा धुवमेव णाणादो हीणो वा अहिओ वा हवदि।

अर्थ- इस लोक मे जिसके (मत में) आत्मा ज्ञान-प्रमाण नहीं होता है उसके (मत में) वह आत्मा अवश्य ही ज्ञान से कम अथवा अधिक होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

25. हीणो जदि सो आदा तण्णाणमचेदणं ण जाणादि।
अहिओ वा णाणादो णाणेण विणा कहं णादि।।

हीणो	(हीण) 1/1 वि	कम
जदि	अव्यय	यदि
सो	(त) 1/1 सवि	वह
आदा	(आद) 1/1	आत्मा
तण्णाणमचेदणं	[(तण्णाणं)+(अचेदणं)]	
	तण्णाणं (तण्णाण) 1/1 अनि	वह ज्ञान
	अचेदणं (अचेदण) 1/1 वि	चैतन्यरहित
ण	अव्यय	नहीं
जाणादि[1]	(जाण) व 3/1 सक	जानेगा
अहिओ	(अहिअ) 1/1 वि	अधिक
वा	अव्यय	और
णाणादो	(णाण) 5/1	ज्ञान से
णाणेण[2]	(णाण) 3/1	ज्ञान के
विणा	अव्यय	बिना
कहं	अव्यय	कैसे
णादि[1]	(णा) व 3/1 सक	जानेगा

अन्वय– जदि सो आदा णाणादो हीणो तण्णाणमचेदणं ण जाणादि वा अहिओ णाणेण विणा कहं णादि।

अर्थ– यदि वह आत्मा ज्ञान से कम है (तो) वह ज्ञान चैतन्यरहित (होता है) (अतः) (वह) नहीं जानेगा और (यदि वह आत्मा) (ज्ञान से) अधिक है (तो) (वह आत्मा) ज्ञान के बिना कैसे जानेगा?

---

1. वर्तमानकाल के प्रत्ययों के होने पर कभी-कभी अन्त्यस्थ 'अ' के स्थान पर 'आ' हो जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-158 वृत्ति)।
   प्रश्नवाचक शब्दों के साथ वर्तमानकाल का प्रयोग प्रायः भविष्यत्काल के अर्थ में होता है।
2. 'बिना' के योग में द्वितीया, तृतीया तथा पंचमी विभक्ति का प्रयोग होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

26. सव्वगदो जिणवसहो सव्वे वि य तग्गया जगदि अट्ठा।
णाणमयादो य जिणो विसयादो तस्स ते भणिया।।

सव्वगदो	(सव्वगद) 1/1 वि	सर्वव्यापक (सब ज्ञेयों में पहुँचे हुए)
जिणवसहो	(जिणवसह) 1/1	अरिहंत देव
सव्वे	(सव्व) 1/2 सवि	सब
वि	अव्यय	ही
य	अव्यय	और
तग्गया	(तग्गय) भूकृ 1/2 अनि	उनमें स्थित
जगदि	(जगदि) 7/1 अनि	जगत में
अट्ठा	(अट्ठ) 1/2	पदार्थ
णाणमयादो	(णाणमय) 5/1 वि	ज्ञानमय होने से
य	अव्यय	पादपूरक
जिणो	(जिण) 1/1	केवली
विसयादो	(विसय) 5/1	विषय होने से
तस्स	(त) 6/1	उसके
ते	(त) 1/2 सवि	वे
भणिया	(भणिय→भणिया) भूकृ 1/2	कहे गये

अन्वय- णाणमयादो जिणो जिणवसहो सव्वगदो य जगदि ते सव्वे वि अट्ठा तस्स विसयादो तग्गया भणिया य।

अर्थ- ज्ञानमय होने से केवली अरिहन्त देव सर्वव्यापक अर्थात् (सब ज्ञेयों में पहुँचे हुए) (हैं) और जगत में वे सब ही पदार्थ उनके विषय होने से उनमें स्थित कहे गये (हैं)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

27. णाणं अप्प त्ति मदं वट्टदि णाणं विणा ण अप्पाणं।
तम्हा णाणं अप्पा अप्पा णाणं व अण्णं वा।।

णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
अप्प त्ति	[(अप्प)+(इति)]	
	अप्प (मूलशब्द) (अप्प) 1/1	आत्मा
	इति (अ) = चूँकि	चूँकि
मदं	(मद) भूकृ 1/1 अनि	कहा गया
वट्टदि	(वट्ट) व 3/1 अक	होता है
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
विणा	अव्यय	बिना
ण	अव्यय	नहीं
अप्पाणं[1]	(अप्पाण) 2/1	आत्मा के
तम्हा	अव्यय	इसलिए
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
व	अव्यय	और
अण्णं	(अण्ण) 1/1 सवि	अन्य
वा	अव्यय	भी

अन्वय– अप्प णाणं मदं त्ति अप्पाणं विणा णाणं ण वट्टदि तम्हा णाणं अप्पा व अप्पा णाणं वा अण्णं।

अर्थ– आत्मा ज्ञान कहा गया (है)। चूँकि आत्मा के बिना ज्ञान नहीं होता है, इसलिये ज्ञान आत्मा (है) और आत्मा ज्ञान (है) (तथा) अन्य भी (है) अर्थात् (अन्य गुणों से युक्त भी होता है)।

1. 'बिना' के योग में द्वितीया विभक्ति का प्रयोग होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

28. णाणी णाणसहावो अट्ठा णेयप्पगा हि णाणिस्स।
रूवाणि व चक्खूणं णेवण्णोण्णेसु वट्टंति।।

णाणी	(णाणि) 1/1 वि	ज्ञानी
णाणसहावो	{[(णाण)-(सहाव)1/1] वि}	ज्ञानस्वभाववाला
अट्ठा	(अट्ठ) 1/2	पदार्थ
णेयप्पगा	[(णेय) विधिकृ अनि-	ज्ञेय
	(अप्पग) 1/2 वि]	स्वभाववाला
हि	अव्यय	निश्चय ही
णाणिस्स	(णाणि) 4/1 वि	ज्ञानी के लिए
रूवाणि	(रूव) 1/2 वि	रूपी पदार्थ
व	अव्यय	जैसे कि
चक्खूणं	(चक्खु) 4/2	चक्षुओं के लिए
णेवण्णोण्णेसु	[(णेव)+(अण्णोण्णेसु)]	
	णेव (अ) = नहीं	नहीं
	अण्णोण्णेसु (अण्णोण्ण)7/2 वि	परस्पर में
वट्टंति	(वट्ट) व 3/2 अक	व्यवहार करते हैं

अन्वय– हि णाणी णाणसहावो अट्ठा णेयप्पगा णाणिस्स व चक्खूणं रूवाणि अण्णोण्णेसु णेव वट्टंति।

अर्थ– निश्चय ही ज्ञानी ज्ञानस्वभाववाला (होता है) (और) पदार्थ (भी) ज्ञेय स्वभाववाला (होता है)। ज्ञानी के लिए (पदार्थ) (ऐसे ही हैं) जैसे कि चक्षुओं के लिए रूपी पदार्थ। (वे) (ज्ञान और पदार्थ) परस्पर में व्यवहार नहीं करते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

29. ण पविट्ठो णाविट्ठो णाणी णेयेसु रूवमिव चक्खू।
जाणदि पस्सदि णियदं अक्खातीदो जगमसेसं।।

ण	अव्यय	नहीं
पविट्ठो	(पविट्ठ) भूकृ 1/1 अनि	भीतर पहुँचा हुआ
णाविट्ठो	[(ण)+(अविट्ठो)]	
	ण (अ) = नहीं	नहीं
	अविट्ठो (अ-विट्ठ) भूकृ	भीतर पहुँचा हुआ
	1/1 अनि	भी नहीं
णाणी	(णाणि) 1/1 वि	ज्ञानी
णेयेसु	(णेय) विधिकृ 7/2 अनि	ज्ञेयों में
रूवमिव	[(रूवं)+(इव)]	
	रूवं (रूव) 2/1	रूप को
	इव (अ) = जैसे कि	जैसे कि
चक्खू	(चक्खु) 1/1	चक्षु
जाणदि	(जाण) व 3/1 सक	जानता है
पस्सदि	(पस्स) व 3/1 सक	देखता है
णियदं	अव्यय	लगातार
अक्खातीदो	(अक्खातीद) 1/1 वि	इन्द्रियों से परे गया हुआ
जगमसेसं	[(जगं)+(असेसं)]	
	जगं[1] (जग) 2/1	संसार में
	असेसं (असेस) 2/1 वि	समस्त

अन्वय– अक्खातीदो णाणी असेसं जगं णेयेसु पविट्ठो ण अविट्ठो ण णियदं जाणदि पस्सदि इव चक्खू रूवं।

अर्थ– इन्द्रियों से परे गया हुआ ज्ञानी समस्त संसार में ज्ञेयों में भीतर पहुँचा हुआ नहीं (है) (तथा) नहीं भीतर पहुँचा हुआ (ऐसा) भी नहीं (है)। (वह) लगातार जानता-देखता है, जैसे कि चक्षु रूप को।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

30. रयणमिह इन्दणीलं दुद्धज्झसियं जहा सभासाए।
अभिभूय तं पि दुद्धं वट्टदि तह णाणमत्थेसु।।

रयणमिह	[(रयणं)+(इह)]	
	रयणं (रयण) 1/1	रत्न
	इह (अ) = इस लोक में	इस लोक में
इन्दणीलं	(इन्दणील) 1/1	इन्द्रणील
दुद्धज्झसियं	[(दुद्ध)-(ज्झसिय) 1/1 वि]	दूध में डाला हुआ
जहा	अव्यय	जिस प्रकार
सभासाए	(स-भासा) 3/1	अपनी दीप्ति से
अभिभूय	(अभिभूय) संकृ अनि	व्याप्त होकर
तं	(त) 2/1 सवि	उस
पि	अव्यय	भी
दुद्धं[1]	(दुद्ध) 2/1	दूध में
वट्टदि	(वट्ट) व 3/1 अक	रहता है
तह	अव्यय	उसी प्रकार
णाणमत्थेसु	[(णाणं)+(अत्थेसु)]	
	णाणं (णाण) 1/1	ज्ञान
	अत्थेसु (अत्थ) 7/2	पदार्थों में

अन्वय– इह जहा दुद्धज्झसियं इन्दणीलं रयणं सभासाए तं दुद्धं अभिभूय वट्टदि तह णाणं पि अत्थेसु।

अर्थ– इस लोक में जिस प्रकार दूध में डाला हुआ इन्द्रनील रत्न अपनी दीप्ति से उस दूध में व्याप्त होकर रहता है, उसी प्रकार ज्ञान भी पदार्थों में (व्याप्त होकर) (रहता है)।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

31. जदि ते ण संति अट्ठा णाणे णाणं ण होदि सव्वगयं।
सव्वगयं वा णाणं कहं ण णाणट्ठिया अट्ठा।।

जदि	अव्यय	यदि
ते	(त) 1/2 सवि	वे
ण	अव्यय	नहीं
संति	(संति) व 3/2 अक अनि	होते हैं
अट्ठा	(अट्ठ) 1/2	पदार्थ
णाणे	(णाण) 7/1	ज्ञान में
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
ण	अव्यय	नहीं
होदि	व 3/1 अक	होता है
सव्वगयं	(सव्वगय) 1/1 वि	सर्वव्यापक
सव्वगयं	(सव्वगय) 1/1 वि	सर्वव्यापक
वा	अव्यय	और
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
कहं	अव्यय	कैसे
ण	अव्यय	नहीं
णाणट्ठिया	[(णाण)-(ट्ठिय) भूकृ 1/2 अनि]	ज्ञानस्थित
अट्ठा	(अट्ठ) 1/2	पदार्थ

अन्वय– जदि ते अट्ठा णाणे ण संति णाणं सव्वगयं ण होदि वा णाणं सव्वगयं अट्ठा णाणट्ठिया कहं ण।

अर्थ– यदि वे पदार्थ ज्ञान में नहीं होते हैं (तो) ज्ञान सर्वव्यापक नहीं होता है और (यदि) ज्ञान सर्वव्यापक (होता है) तो पदार्थ ज्ञानस्थित कैसे नहीं (है)?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

32. गेण्हदि णेव ण मुंचदि ण परं परिणमदि केवली भगवं।
पेच्छदि समंतदो सो जाणदि सव्वं णिरवसेसं।।

गेण्हदि	(गेण्ह) व 3/1 सक	ग्रहण करता है
णेव	अव्यय	न ही
ण	अव्यय	न
मुंचदि	(मुंच) व 3/1 सक	छोड़ता है
ण	अव्यय	न
परं	(पर) 2/1 वि	पर को
परिणमदि	(परिणम) व 3/1 सक	बदलता है
केवली	(केवलि) 1/1 वि	केवली
भगवं	(भगवन्त) 1/1	भगवान
पेच्छदि	(पेच्छ) व 3/1 सक	देखता है
समंतदो	अव्यय	सब और से/ चारों तरफ से
सो	(त) 1/1 सवि	वह
जाणदि	(जाण) व 3/1 सक	जानता है
सव्वं	(सव्व) 2/1 सवि	समस्त (पदार्थों) को
णिरवसेसं	(णिरवसेस) 2/1 वि	शेषरहित

अन्वय– केवली भगवं परं ण गेण्हदि ण मुंचदि णेव परिणमदि सो णिरवसेसं सव्वं समंतदो जाणदि पेच्छदि।

अर्थ– केवली भगवान पर (वस्तु) को न ग्रहण करते हैं, न छोड़ते हैं, न ही (उसको) बदलते हैं। वे शेषरहित समस्त (पदार्थों) को सब ओर से जानते-देखते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

33. जो हि सुदेण विजाणदि अप्पाणं जाणगं सहावेण।
तं सुयकेवलिमिसिणो भणंति लोयप्पदीवयरा।।

जो	(ज) 1/1 सवि	जो
हि	अव्यय	ही
सुदेण	(सुद) 3/1	श्रुतज्ञान के द्वारा
विजाणदि	(विजाण) व 3/1 सक	जानता है
अप्पाणं	(अप्पाण) 2/1	आत्मा को
जाणगं	(जाणग) 2/1 वि	जाननेवाले
सहावेण	(सहाव) 3/1	स्वभाव से
तं	(त) 2/1 सवि	उसको
सुयकेवलिमिसिणो	[(सुयकेवलिं)+(इसिणो)]	
	सुयकेवलिं (सुयकेवलि) 2/1 वि	श्रुतकेवली
	इसिणो (इसि) 1/2	देव
भणंति	(भण) व 3/2 सक	कहते हैं
लोयप्पदीवयरा	[(लोय)-(प्पदीवयर) 1/2 वि]	लोक के प्रकाशक

अन्वय- जो सहावेण हि जाणगं अप्पाणं सुदेण विजाणदि लोयप्प-दीवयरा इसिणो तं सुयकेवलिं भणंति।

अर्थ- जो स्वभाव से ही जाननेवाले (ज्ञायक) आत्मा को श्रुतज्ञान के द्वारा जानता है, लोक के प्रकाशक देव उसको श्रुतकेवली कहते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

34. सुत्तं जिणोवदिट्ठं पोग्गलदव्वप्पगेहिं वयणेहिं।
तं जाणणा हि णाणं सुत्तस्स य जाणणा भणिया।।

सुत्तं	(सुत्त) 1/1	सूत्र
जिणोवदिट्ठं	[(जिण)+(उवदिट्ठं)]	
	[(जिण)-(उवदिट्ठ)	जिनेन्द्र देव के द्वारा
	1/1 वि]	उपदेश दिया गया
पोग्गलदव्वप्पगेहिं	[(पोग्गलदव्व)+(अप्पगेहिं)]	
	[(पोग्गल)-(दव्व)-	पुद्गल द्रव्य से निर्मित
	(अप्पग) 3/2 वि]	
वयणेहिं	(वयण) 3/2	वचनों से
तं	(त) 1/1 सवि	वह
जाणणा	(जाणणा) 1/1	बोध
हि	अव्यय	इसलिए
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
सुत्तस्स	(सुत्त) 6/1	सूत्र का
य	अव्यय	चूँकि
जाणणा	(जाणणा) 1/1	बोध
भणिया	(भणिय(स्त्री)→भणिया) 1/1	कहा गया

अन्वय- पोग्गलदव्वप्पगेहिं वयणेहिं जिणोवदिट्ठं तं सुत्तं य जाणणा णाणं हि सुत्तस्स जाणणा भणिया।

अर्थ- पुद्गल द्रव्य से निर्मित वचनों से जिनेन्द्र देव के द्वारा (जो) उपदेश दिया गया (है), वह सूत्र (है)। चूँकि (उपदेश से उत्पन्न) बोध ज्ञान (है)। इसलिए (इसी प्रकार) सूत्र का बोध कहा गया (है) (वह भी ज्ञान है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

35. जो जाणदि सो णाणं ण हवदि णाणेण जाणगो आदा।
णाणं परिणमदि सयं अट्ठा णाणट्ठिया सव्वे।।

जो	(ज) 1/1 सवि	जो
जाणदि	(जाण) व 3/1 सक	जानता है
सो	(त) 1/1 सवि	वह
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
ण	अव्यय	नहीं
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
णाणेण	(णाण) 3/1	ज्ञान के द्वारा
जाणगो	(जाणग) 1/1 वि	जाननेवाला
आदा	(आद) 1/1	आत्मा
णाणं[1]	(णाण) 2/1	ज्ञान में
परिणमदि	(परिणम) व 3/1 अक	रूपान्तरित होता है
सयं	अव्यय	स्वयं ही
अट्ठा	(अट्ठ) 1/2	पदार्थ
णाणट्ठिया	[(णाण)-(ट्ठिय) भूकृ 1/2 अनि]	ज्ञान में स्थित
सव्वे	(सव्व) 1/2 सवि	समस्त

अन्वय- जो जाणदि सो णाणं आदा णाणेण जाणगो ण हवदि सयं णाणं परिणमदि सव्वे अट्ठा णाणट्ठिया।

अर्थ- जो जानता है, वह ज्ञान है। आत्मा ज्ञान के द्वारा जाननेवाला (ज्ञायक) नहीं होता है। (वह आत्मा) स्वयं ही ज्ञान में रूपान्तरित होता है, (और) समस्त पदार्थ ज्ञान में स्थित (हैं)।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

36. तम्हा णाणं जीवो णेयं दव्वं तिहा समक्खादं।
दव्वं ति पुणो आदा परं च परिणामसंबद्धं।।

तम्हा	अव्यय	इसलिए
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
जीवो	(जीव) 1/1	जीव
णेयं	(णेय) विधिकृ 1/1 अनि	ज्ञेय
दव्वं	(दव्व) 1/1	द्रव्य
तिहा	अव्यय	तीन प्रकार से
समक्खादं	(समक्खाद) भूकृ 1/1 अनि	कहा गया
दव्वं ति	[(दव्व)+(इति)]	
	दव्वं (दव्व) 1/1	द्रव्य
	इति (अ) =	पादपूरक
पुणो	अव्यय	फिर
आदा	(आद) 1/1	आत्मा
परं	(पर) 1/1 वि	अन्य
च	अव्यय	और
परिणामसंबद्धं	[(परिणाम)-(संबद्धं)	परिणमन से पूर्णतः
	भूकृ 1/1 अनि]	निर्मित

अन्वय– तम्हा जीवो णाणं दव्वं णेयं तिहा समक्खादं पुणो आदा च परं दव्वं ति परिणामसंबद्धं।

अर्थ– इसलिए जीव ज्ञान (है)। द्रव्य ज्ञेय (है), (जो) (द्रव्य) (है) (वह) तीन प्रकार (उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य) से कहा गया (है)। फिर (वह) आत्मा और अन्य द्रव्य परिणमन से पूर्णतः निर्मित (द्रव्य) (है) अर्थात् (परिणमन को द्रव्य से अलग नहीं किया जा सकता है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

37. तक्कालिगेव सव्वे सदसब्भूदा हि पज्जाया तासिं।
वट्टन्ते ते णाणे विसेसदो दव्वजादीणं।।

तक्कालिगेव	[(तक्कालिगा)+(इव)]	
	तक्कालिगा (तक्कालिग) 1/2 वि	वर्तमानकाल संबंधी
	इव (अ) = समान	समान
सव्वे	(सव्व) 1/2 सवि	समस्त
सदसब्भूदा	[(सद)+(असब्भूद)]	
	[(सद) वि-(असब्भूद) 1/2 वि]	विद्यमान और अविद्यमान
हि	अव्यय	निश्चय ही
पज्जाया	(पज्जाय) 1/2	पर्यायें
तासिं[1]	(ता) 6/2 सवि	उन
वट्टन्ते	(वट्ट) व 3/2 अक	मौजूद होती हैं
ते	(त) 1/2 सवि	वे
णाणे	(णाण) 7/1	ज्ञान में
विसेसदो	(विसेसदो) अव्यय पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	खास तोर से
दव्वजादीणं	[(दव्व)-(जादि) 6/2]	द्रव्य-वर्गों की

अन्वय- तासिं दव्वजादीणं ते सव्वे सदसब्भूदा पज्जाया हि तक्कालिगेव विसेसदो णाणे वट्टन्ते।

अर्थ- उन द्रव्य-वर्गों की वे समस्त विद्यमान और अविद्यमान पर्यायें निश्चय ही वर्तमानकाल संबंधी (पर्यायों के) समान खास तोर से ज्ञान (केवलज्ञान) में मौजूद होती हैं।

---

1. स्त्रीलिंग में 'तासिं' का प्रयोग मिलता है।
(पिशलः प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ 630)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

38. जे णेव हि संजाया जे खलु णट्ठा भवीय पज्जाया।
ते होंति असब्भूदा पज्जाया णाणपच्चक्खा।।

जे	(ज) 1/2 सवि	जो
णेव	अव्यय	नहीं
हि	अव्यय	ही
संजाया	(संजाय) भूकृ 1/2 अनि	उत्पन्न हुई
जे	(ज) 1/2 सवि	जो
खलु	अव्यय	वास्तव में
णट्ठा	(णट्ठ) भूकृ 1/2 अनि	नष्ट हुई
भवीय[1]	(भव→भविय→भवीय) संकृ	होकर
पज्जाया	(पज्जाय) 1/2	पर्यायें
ते	(त) 1/2 सवि	वे
होंति	(हो) व 3/2 अक	होती हैं
असब्भूदा	(असब्भूद) 1/2 वि	अविद्यमान
पज्जाया	(पज्जाय) 1/2	पर्यायें
णाणपच्चक्खा	[(णाण)-(पच्चक्ख) 1/2 वि]	ज्ञान में प्रत्यक्ष

अन्वय– जे पज्जाया संजाया हि णेव जे खलु भवीय णट्ठा ते असब्भूदा पज्जाया णाणपच्चक्खा होंति।

अर्थ– जो पर्यायें उत्पन्न ही नहीं हुई (हैं) (तथा) जो (पर्यायें) वास्तव में (उत्पन्न) होकर नष्ट हुई (हैं), वे अविद्यमान पर्यायें ज्ञान (केवलज्ञान) में प्रत्यक्ष होती हैं।

---

1. छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'भविय' को 'भवीय' किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

39. जदि पच्चक्खमजायं पज्जायं पलइयं च णाणस्स।
ण हवदि वा तं णाणं दिव्वं ति हि के परूवेंति।।

जदि	अव्यय	यदि
पच्चक्खमजायं	[(पच्चक्खं)+(अजायं)]	
	पच्चक्खं (पच्चक्ख) 1/1	प्रत्यक्ष
	अजायं (अजाय)भूकृ 1/1 अनि	अनुत्पन्न हुई
पज्जायं	(पज्जाय) 1/1	पर्याय
पलइयं[1]	(पलाअ→पलअ) भूकृ 1/1	नष्ट हुई
च	अव्यय	तथा
णाणस्स[2]	(णाण) 6/1	ज्ञान में
ण	अव्यय	नहीं
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होती है
वा	अव्यय	पादपूरक
तं	(त) 2/1 सवि	उस को
णाणं	(णाण) 2/1	ज्ञान को
दिव्वं ति	[(दिव्व)+(इति))]	
	दिव्वं (दिव्व) 2/1 वि	दिव्य
	इति (अ) = इस कारण	इस कारण
हि	अव्यय	निश्चय ही
के	(क) 1/2 सवि	कौन
परूवेंति[3]	(परूव) व 3/2 सक	प्रतिपादन करेगा

अन्वय– जदि अजायं च पलइयं पज्जायं णाणस्स पच्चक्खं ण हवदि ति वा तं णाणं हि दिव्वं के परूवेंति।

अर्थ– यदि अनुत्पन्न हुई तथा नष्ट हुई पर्याय ज्ञान में प्रत्यक्ष नहीं होती है (तो) इस कारण उस ज्ञान को निश्चय ही दिव्य कौन प्रतिपादन करेगा?

---

1. छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'पलाइयं' का 'पलइयं' हुआ है।
2. कभीं-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम प्राकृत व्याकरण 3-134)
3. प्रश्नवाचक शब्दों के साथ वर्तमानकाल का प्रयोग प्रायः भविष्यत्काल के अर्थ में होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

40. अत्थं अक्खणिवदिदं ईहापुव्वेहिं जे विजाणंति।
तेसिं परोक्खभूदं णादुमसक्कं ति पण्णत्तं।।

अत्थं	(अत्थ) 2/1	पदार्थ को
अक्खणिवदिदं	[(अक्ख)-(णिवदिद) भूकृ 2/1 अनि]	इन्द्रिय के सम्मुख आये हुए को
ईहापुव्वेहिं	[(ईहा)-(पुव्व) 3/2 वि]	ईहा आदि से युक्त
जे	(ज) 1/2 सवि	जो
विजाणंति	(विजाण) व 3/2 सक	जानते हैं
तेसिं	(त) 4/2 सवि	उनके लिए
परोक्खभूदं	[(परोक्ख)-(भूद) भूकृ 2/1 अनि]	अनुपस्थित हुए को
णादुमसक्कं ति	[(णादुं)+(असक्कं)+(इति)]	
	णादुं (णा) हेकृ	जानना
	असक्कं (असक्क) 1/1 वि	असंभव
	इति (अ) =	पादपूरक
पण्णत्तं	(पण्णत्त) भूकृ 1/1 अनि	कहा गया

अन्वय- जे अक्खणिवदिदं अत्थं ईहापुव्वेहिं विजाणंति तेसिं परोक्खभूदं णादुमसक्कं ति पण्णत्तं।

अर्थ- जो इन्द्रियों के सम्मुख आये हुए पदार्थ को ईहा[1] आदि से युक्त (साधनों से) जानते हैं, उनके लिए अनुपस्थित हुए (पदार्थ) को जानना असंभव कहा गया (है)।

---

1. मतिज्ञान की प्रक्रिया का अंग।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

41. अपदेसं सपदेसं मुत्तममुत्तं च पज्जयमजादं।
पलयं गयं च जाणदि तं णाणमदिंदियं भणियं।।

अपदेसं	(अ-पदेस) 2/1 वि	प्रदेश-रहित को
सपदेसं	(स-पदेस) 2/1 वि	प्रदेश-सहित को
मुत्तममुत्तं	[(मुत्तं)+(अमुत्तं)]	
	मुत्तं (मुत्त) 2/1 वि	मूर्त को
	अमुत्तं (अमुत्त) 2/1 वि	अमूर्त को
च	अव्यय	और
पज्जयमजादं	[(पज्जयं)+(अजादं)]	
	पज्जयं (पज्जाय→पज्जय) 2/1	पर्याय को
	अजादं (अजा) भूकृ 2/1	अनुत्पन्न को
पलयं	(पलय) 2/1	विनाश को
गयं	(गय) भूकृ 2/1 अनि	प्राप्त हुई
च	अव्यय	और
जाणदि	(जाण) व 3/1 सक	जानता है
तं	(त) 1/1 सवि	वह
णाणमदिंदियं	[(णाणं)+(अदिंदियं)]	
	णाणं (णाण) 1/1	ज्ञान
	अदिंदियं (अदिंदिय) 1/1 वि	अतीन्द्रिय
भणियं	(भण→भणिय) भूकृ 1/1	कहा गया

अन्वय– अपदेसं सपदेसं मुत्तममुत्तं च पज्जयमजादं पलयं गयं च जाणदि तं णाणमदिंदियं भणियं।

अर्थ– (जो) (ज्ञान) प्रदेश-रहित (कालाणु और परमाणु) को, प्रदेश-सहित (जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश) को, मूर्त (पुद्गलों) को और अमूर्त (जीव, धर्म, अधर्म, आकाश और काल) को (तथा) अनुत्पन्न पर्याय को और विनाश को प्राप्त हुई (पर्याय) को जानता है वह ज्ञान (केवलज्ञान) अतीन्द्रिय कहा गया (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

42. परिणमदि णेयमट्ठं णादा जदि णेव खाइगं तस्स।
णाणं ति तं जिणिंदा खवयंतं कम्ममेवुत्ता।।

परिणमदि	(परिणम) व 3/1 सक	रूपान्तरित करता है
णेयमट्ठं	[(णेयं)+(अट्ठं)]	
	णेयं (णेय) विधिकृ 2/1 अनि	ज्ञेय
	अट्ठं (अट्ठ) 2/1	पदार्थ को
णादा	(णादु) 1/1 वि	ज्ञाता
जदि	अव्यय	यदि
णेव	अव्यय	नहीं
खाइगं	(खाइग) 1/1	क्षायिक
तस्स	(त) 6/1 सवि	उसका
णाणं ति	[(णाणं)+(इति)]	ज्ञान
	णाणं (णाण) 1/1	
	इति (अ) = इसलिए	इसलिए
तं	(त) 2/1 सवि	उसे
जिणिंदा	(जिणिंद) 1/2	जिनेन्द्रदेवों ने
खवयंतं	(खवयंत) वकृ 2/1 अनि	विसर्जन करता हुआ
कम्ममेवुत्ता[1]	[(कम्मं)+(एव)+(उत्ता)]	
	कम्मं (कम्म) 2/1	कर्म को
	एव (अ) = ही	ही
	उत्ता (उत्त) भूकृ 1/2 अनि	कहा

अन्वय– जदि णादा णेयमट्ठं परिणमदि तस्स णाणं खाइगं णेव ति जिणिंदा तं कम्मं खवयंतं एव उत्ता।

अर्थ– यदि ज्ञाता ज्ञेय पदार्थ को रूपान्तरित करता है (तो) उसका ज्ञान क्षायिक (कर्मों के क्षय से उत्पन्न) नहीं (होता है)। इसलिए जिनेन्द्रदेवों ने उसे कर्म का विसर्जन करता हुआ (व्यक्ति) ही कहा (है)।

1. यहाँ भूतकालिक कृदन्त का प्रयोग कर्तृवाच्य में किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

43. उदयगदा कम्मंसा जिणवरवसहेहिं णियदिणा भणिया।
तेसु विमूढो रत्तो दुट्ठो वा बंधमणुभवदि।।

उदयगदा	[(उदय)-(गद)भूकृ 1/2 अनि]	उदय में आये हुए
कम्मंसा	[(कम्म)+(अंसा)]	
	[(कम्म)-(अंस) 1/2]	कर्मों के खंड
जिणवरवसहेहिं	[(जिणवर)-(वसह) 3/2]	जिनवर अरिहंतों द्वारा
णियदिणा[1]	[(णियद)+(इणा)]	
	[(णियद) वि-(एअ) 3/1]	इस रूप में नियत
भणिया	(भणिय→भणिया) भूकृ 1/2	कहे गये
तेसु[2]	(त) 7/2 सवि	उनसे
विमूढो	(विमूढ) 1/1 भूकृ अनि	मोहित हुआ
रत्तो	(रत्त) 1/1 भूकृ अनि	राग-युक्त हुआ
दुट्ठो	(दुट्ठ) 1/1 भूकृ अनि	द्वेष-युक्त हुआ
वा	अव्यय	या
बंधमणुभवदि	[(बंधं)+(अणुभवदि)]	
	बंधं (बंध) 2/1	कर्मबंध को
	अणुभवदि (अणुभव) व 3/1 सक	भोगता है

अन्वय- उदयगदा कम्मंसा णियदिणा जिणवरवसहेहिं भणिया तेसु विमूढो रत्तो वा दुट्ठो बंधमणुभवदि।

अर्थ- (कर्म-फल के रूप में) उदय में आये हुए कर्मों के खंड इस रूप में नियत (हैं)। जिनवर अरिहंतों द्वारा (इस रूप में कर्मों के खंड) कहे गये (हैं)। उन (कर्मखंडों) से मोहित हुआ, राग-युक्त या द्वेष-युक्त हुआ (व्यक्ति) कर्मबंध को भोगता है।

---

1. णियदिणा = (णियद+एइणा) = णियदेइणा = (णियदे+इणा)= णियदिणा।
2. *यहाँ तृतीया विभक्ति का प्रयोग सप्तमी अर्थ में हुआ है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)*
3. यहाँ सप्तमी विभक्ति का प्रयोग तृतीया अर्थ में हुआ है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

44. ठाणणिसेज्जविहारा धम्मुवदेसो य णियदयो तेसिं।
अरहंताणं काले मायाचारो व्व इत्थीणं।।

ठाणणिसेज्जविहारा	[(ठाण)-(णिसेज्जा→णिसेज्ज)[1] -(विहार) 1/2]	खड़े रहना, बैठना, गमन करना
धम्मुवदेसो	[(धम्म)+(उवदेसो)] [(धम्म)-(उवदेस) 1/1]	धर्म का उपदेश
य	अव्यय	तथा
णियदयो	(णियदयो) अव्यय पंचमी अर्थक 'यो' प्रत्यय	अचूक रूप से
तेसिं	(त) 6/2 सवि	उनका
अरहंताणं	(अरहंत) 6/2	अरिहंतों की
काले	(काल) 7/1	अवस्था में
मायाचारो	(मायाचार) 1/1	मातृत्व
व्व	अव्यय	के समान
इत्थीणं	(इत्थी) 6/2	स्त्रियों के

अन्वय- अरहंताणं काले तेसिं ठाणणिसेज्जविहारा य धम्मुवदेसो इत्थीणं मायाचारो व्व णियदयो।

अर्थ- अरिहंतों की अवस्था में उनका (अरिहंतों का) खड़े रहना, बैठना, गमन करना तथा धर्म का उपदेश (धर्मोपदेश देना)- (ये सब क्रियाएँ) स्त्रियों के मातृत्व (माता के आचरण) के समान अचूक रूप से (अनिवार्य रूप से) (होती है)।

---

1. यहाँ छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'णिसेज्जा' का 'णिसेज्ज' किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

45. पुण्णफला अरहंता तेसिं किरिया पुणो हि ओदइया।
मोहादीहिं विरहिया तम्हा सा खाइग त्ति मदा।।

पुण्णफला	[(पुण्ण)-(फल) 5/1]	पुण्य के प्रभाव से
अरहंता	(अरहंत) 1/2	अरिहंत
तेसिं	(त) 6/2 सवि	उनकी
किरिया	(किरिया) 1/1	क्रिया
पुणो	अव्यय	और
हि	अव्यय	ही
ओदइया	(ओदइय (स्त्री)→ओदइया) 1/1 वि	औदयिकी
मोहादीहिं[1]	[(मोह)+(आदीहिं)]	
	[(मोह)-(आदि) 3/2]	मोह आदि से
विरहिया	(विरहिय (स्त्री)→विरहिया) भूकृ 1/1 अनि	रहित
तम्हा	अव्यय	इसलिये
सा	(ता) 1/1 वि	वह
खाइग त्ति	[(खाइगा)+(इति)]	
	खाइगा (खाइग (स्त्री)→खाइगा) 1/1 वि	क्षायिकी
	इति (अ) = ही	ही
मदा	(मद (स्त्री)→मदा) भूकृ 1/1 अनि	मानी गई

अन्वय– अरहंता पुण्णफला पुणो तेसिं किरिया मोहादीहिं विरहिया हि ओदइया तम्हा सा खाइग त्ति मदा।

अर्थ– अरिहंत पुण्य के प्रभाव से (होते हैं) और उनकी क्रिया मोहादि से रहित ही औदयिकी (कर्मोदय से निष्पन्न/कर्मक्षय के निमित्त उत्पन्न) (होती है), इसलिए वह (क्रिया) क्षायिकी ही (कर्म का क्षय करनेवाली) मानी गई (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

46. जदि सो सुहो व असुहो ण हवदि आदा सयं सहावेण।
संसारो वि ण विज्जदि सव्वेसिं जीवकायाणं।।

जदि	अव्यय	यदि
सो	(त) 1/1 सवि	वह
सुहो	(सुह) 1/1 वि	शुभ
व	*अव्यय*	*या*
असुहो	*(असुह) 1/1 वि*	*अशुभ*
ण	अव्यय	नहीं
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता
आदा	(आद) 1/1	आत्मा
सयं	अव्यय	अपने
सहावेण	(सहाव) 3/1	स्वभाव से
संसारो	(संसार) 1/1	संसार
वि	अव्यय	भी
ण	अव्यय	नहीं
विज्जदि	(विज्ज) व 3/1 अक	विद्यमान होता है
सव्वेसिं	(सव्व) 6/2 सवि	समस्त
जीवकायाणं	(जीवकाय) 6/2	जीवसमूहों के

अन्वय– जदि सो आदा सयं सहावेण सुहो व असुहो ण हवदि सव्वेसिं जीवकायाणं संसारो वि ण विज्जदि।

अर्थ– यदि वह आत्मा अपने (चले आ रहे) स्वभाव से (ही) शुभ या अशुभ नहीं होता (तो) समस्त जीवसमूहों के संसार (जन्म-मरण) भी विद्यमान नहीं होता।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

47. जं तक्कालियमिदरं जाणदि जुगवं समंतदो सव्वं।
अत्थं विचित्तविसमं तं णाणं खाइयं भणियं।।

जं	(ज) 1/1 सवि	जो
तक्कालियमिदरं	[(तक्कालियं)+(इदरं)]	
	तक्कालियं (तक्कालिय)2/1वि	वर्तमानकाल सम्बन्धी
	इदरं (इदर) 2/1 वि	और अन्य को
जाणदि	(जाण) व 3/1 सक	जानता है
जुगवं	अव्यय	एक ही साथ
समंतदो	(समंतदो)	सब ओर से
सव्वं	(सव्वं)	पूर्णरूप से
	द्वितीयार्थक अव्यय	
अत्थं	(अत्थ) 2/1	पदार्थ को
विचित्तविसमं	[(विचित्त) वि-(विसम)	अनेक प्रकार के और
	2/1 वि]	असमान को
तं	(त) 1/1 सवि	वह
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
खाइयं	(खाइय) 1/1 वि	क्षायिक
भणियं	(भण→भणिय) भूकृ 1/1	कहा गया

अन्वय– जं णाणं समंतदो तक्कालियमिदरं विचित्तविसमं अत्थं सव्वं जुगवं जाणदि तं खाइयं भणियं।

अर्थ– जो ज्ञान सब ओर से वर्तमानकाल सम्बन्धी और अन्य (भूत और भविष्यतकाल संबंधी) अनेक प्रकार के और असमान (मूर्त-अमूर्त आदि) पदार्थ को पूर्णरूप से (और) एक ही साथ जानता है वह (ज्ञान) क्षायिक (कर्मों के क्षय से उत्पन्न) (अतीन्द्रिय) कहा गया (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

48. जो ण विजाणदि जुगवं अत्थे तिक्कालिगे तिहुवणत्थे।
णादुं तस्स ण सक्कं सपज्जयं दव्वमेगं वा।।

जो	(ज) 1/1 सवि	जो
ण	अव्यय	नहीं
विजाणदि	(विजाण) व 3/1 सक	जानता है
जुगवं	अव्यय	एक ही साथ
अत्थे	(अत्थ) 2/2	पदार्थों को
तिक्कालिगे	(तिक्कालिग) 2/2 वि	तीन काल संबंधी
तिहुवणत्थे	(तिहुवणत्थ) 2/2 वि	तीन लोक में स्थित
णादुं	(णा) हेकृ	जानना
तस्स	(त) 4/1 सवि	उसके लिए
ण	अव्यय	नहीं
सक्कं	(सक्क) 1/1 वि	संभव
सपज्जयं	(स-पज्जाय) 2/1 वि	पर्याय-सहित
दव्वमेगं	[(दव्वं)+(एगं)]	
	दव्वं (दव्व) 2/1	द्रव्य को
	एगं (एग) 2/1 वि	एक
वा	अव्यय	भी

अन्वय– जो तिहुवणत्थे तिक्कालिगे अत्थे जुगवं ण विजाणदि तस्स सपज्जयं एगं दव्वं वा णादुं सक्कं ण।

अर्थ– जो तीनलोक में स्थित तीनकाल संबंधी पदार्थों को एक ही साथ नहीं जानता उसके लिए पर्याय सहित एक द्रव्य को भी जानना संभव नहीं (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

49. दव्वं अणंतपज्जयमेगमणंताणि दव्वजादाणि।
ण विजाणदि जदि जुगवं किध सो सव्वाणि जाणादि।।

दव्वं	(दव्व) 2/1	द्रव्य को
अणंतपज्जयमेग-	[(अणंतपज्जयं)+(एगं)	
मणंताणि	+(अणंताणि)]	
	[(अणंत) वि-	अनंत पर्याय को
	(पज्जाय→पज्जय) 2/1]	
	एगं (एग) 2/1 वि	एक
	अणंताणि (अणंत) 2/2 वि	अन्तरहित
दव्वजादाणि	[(दव्व)-(जाद) 2/2]	द्रव्यसमूहों को
ण	अव्यय	नहीं
विजाणदि	(विजाण) व 3/1 सक	जानता है
जदि	अव्यय	यदि
जुगवं	अव्यय	एक ही साथ
किध	अव्यय	कैसे
सो	(त) 1/1 सवि	वह
सव्वाणि	(सव्व) 2/2 सवि	समस्त
जाणादि[1]	(जाण) व 3/1 सक	जानेगा

अन्वय– जदि एगं दव्वं अणंतपज्जयं ण विजाणदि सो अणंताणि सव्वाणि दव्वजादाणि जुगवं किध जाणादि।

अर्थ– यदि (कोई) एक द्रव्य को, (उसकी) अनन्त पर्याय को नहीं जानता है (तो) वह अन्तरहित समस्त द्रव्यसमूहों को एक ही साथ कैसे जानेगा?

---

1. वर्तमानकाल के प्रत्ययों के होने पर कभी-कभी अन्त्यस्थ 'अ' के स्थान पर 'आ' हो जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-158 वृत्ति)
प्रश्नवाचक शब्दों के साथ वर्तमानकाल का प्रयोग प्रायः भविष्यत्काल के अर्थ में होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

50. उप्पज्जदि जदि णाणं कमसो अट्ठे पडुच्च णाणिस्स।
तं णेव हवदि णिच्चं ण खाइगं णेव सव्वगदं।।

उप्पज्जदि	(उप्पज्ज) व 3/1 अक	उत्पन्न होता है
जदि	अव्यय	यदि
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
कमसो	अव्यय	क्रम से
अट्ठे	(अट्ठ) 2/2	पदार्थों को
पडुच्च	(पडुच्च) संकृ अनि	अवलम्बन करके
णाणिस्स	(णाणि) 6/1 वि	ज्ञानी का
तं	(त) 1/1 सवि	वह
णेव	अव्यय	न ही
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
णिच्चं	(णिच्च) 1/1 वि	नित्य
ण	अव्यय	न
खाइगं	(खाइग) 1/1 वि	क्षायिक
णेव	अव्यय	न ही
सव्वगदं	(सव्वगद) 1/1 वि	सर्वव्यापक

अन्वय– जदि णाणिस्स णाणं अट्ठे पडुच्च कमसो उप्पज्जदि तं णेव णिच्चं ण खाइगं णेव सव्वगदं हवदि।

अर्थ– यदि ज्ञानी का ज्ञान पदार्थों को अवलम्बन करके क्रम से उत्पन्न होता है (तो) वह (ज्ञान) न ही नित्य, न क्षायिक (कर्मों के नाश से उत्पन्न), (और) न ही सर्वव्यापक होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

51. तिक्कालणिच्चविसमं सयलं सव्वत्थ संभवं चित्तं।
जुगवं जाणदि जोण्हं अहो हि णाणस्स माहप्पं।।

तिक्कालणिच्चविसमं	[(तिक्काल)-(णिच्च) वि-(विसम) 2/1 वि]	तीन काल में चिरस्थायी, असमान
सयलं	(सयल) 2/1 वि	समस्त
सव्वत्थ	अव्यय	सभी जगह
संभवं	(संभव) 2/1	संभव
चित्तं	(चित्त) 2/1 वि	नाना प्रकार के
जुगवं	अव्यय	एक ही साथ
जाणदि	(जाण) व 3/1 सक	जानता है
जोण्हं	(जोण्ह) 1/1 वि	दिव्य (ज्ञान)
अहो	अव्यय	आश्चर्य है!
हि	अव्यय	ही
णाणस्स	(णाण) 6/1	ज्ञान की
माहप्पं	(माहप्प) 1/1	महिमा

अन्वय- अहो जोण्हं तिक्कालणिच्चविसमं सव्वत्थ संभवं चित्तं सयलं जुगवं जाणदि णाणस्स हि माहप्पं।

अर्थ- आश्चर्य है! दिव्य (ज्ञान)- तीन काल में चिरस्थायी, असमान, सभी जगह संभव (उत्पन्न), नाना प्रकार के समस्त (पदार्थों को) एक ही साथ जानता है। (यह) (दिव्य) ज्ञान की ही महिमा (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

52. ण वि परिणमदि ण गेण्हदि उप्पज्जदि णेव तेसु अट्ठेसु।
जाणण्णवि ते आदा अबंधगो तेण पण्णत्तो।।

ण	अव्यय	न
वि	अव्यय	ही
परिणमदि	(परिणम) व 3/1 सक	रूपान्तरित करता है
ण	अव्यय	न
गेण्हदि	(गेण्ह) व 3/1 सक	ग्रहण करता है
उप्पज्जदि	(उप्पज्ज) व 3/1 अक	उत्पन्न होता है
णेव	अव्यय	न ही
तेसु	(त) 7/2 सवि	उन में
अट्ठेसु	(अट्ठ) 7/2	पदार्थों में
जाणण्णवि	[(जाणण्ण)+(अवि)]	
	(जाणण्ण) वकृ 1/1 अनि	जानता हुआ
	अवि (अ) = भी	भी
ते	(त) 2/2 सवि	उनको
आदा	(आद) 1/1	आत्मा
अबंधगो	(अबंधग) 1/1 वि	अबंधक
तेण	अव्यय	इसलिए
पण्णत्तो	(पण्णत्त) भूकृ 1/1 अनि	कहा गया

अन्वय– आदा ते जाणण्णवि ण वि परिणमदि ण गेण्हदि णेव तेसु अट्ठेसु उप्पज्जदि तेण अबंधगो पण्णत्तो।

अर्थ– (चूँकि) आत्मा उन (पदार्थों) को जानता हुआ भी (उन पदार्थों को) न ही रूपान्तरित करता है, न ग्रहण करता है और न ही उन पदार्थों में उत्पन्न होता है, इसलिए (वह) (आत्मा) अबंधक (कर्मबंध नहीं करनेवाला) कहा गया (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

53. अत्थि अमुत्तं मुत्तं अदिंदियं इंदियं च अत्थेसु।
णाणं च तहा सोक्खं जं तेसु परं च तं णेयं।।

अत्थि	(अस) व 3/1 अक	होता है
अमुत्तं	(अमुत्त) 1/1 वि	अमूर्त
मुत्तं	(मुत्त) 1/1 वि	मूर्त
अदिंदियं	(अदिंदिय) 1/1 वि	अतीन्द्रिय
इंदियं[1]	(इंदिय) 1/1 वि	इन्द्रिय
च	अव्यय	और
अत्थेसु	(अत्थ) 7/2	पदार्थों में
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
च	अव्यय	और
तहा	अव्यय	उसी प्रकार
सोक्खं	(सोक्ख) 1/1	सुख
जं	(ज) 1/1 सवि	जो
तेसु	(त) सवि 7/2	उनमें
परं	(पर) 1/1 वि	उत्कृष्ट/सर्वोत्तम
च	अव्यय	पादपूरक
तं	(त) 1/1 सवि	वह
णेयं	(णेय) विधिकृ 1/1 अनि	जानने योग्य

अन्वय– अत्थेसु अदिंदियं णाणं अमुत्तं अत्थि च इंदियं मुत्तं च तहा सोक्खं च तेसु जं परं तं णेयं।

अर्थ– पदार्थों में अतीन्द्रिय ज्ञान अमूर्त होता है (अमूर्त पदार्थ को जानता है) और इन्द्रिय (ज्ञान) मूर्त (होता है) (मूर्त पदार्थ को जानता है)। उसी प्रकार (अतीन्द्रिय) सुख और (इन्द्रिय) (सुख) (होता है)। उनमें जो उत्कृष्ट/सर्वोत्तम (है), वह जानने योग्य (है)।

---

1. यहाँ 'इंदिय' शब्द विशेषण की तरह प्रयुक्त हुआ है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

54. जं पेच्छदो अमुत्तं मुत्तेसु अदिंदियं च पच्छण्णं।
सयलं सगं च इदरं तं णाणं हवदि पच्चक्खं।।

जं	(ज) 1/1 सवि	जो
पेच्छदो	(पेच्छदो) अव्यय	दृष्टा होने के
	पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	फलस्वरूप
अमुत्तं	(अमुत्त) 2/1 वि	अमूर्त को
मुत्तेसु	(मुत्त) 7/2 वि	मूर्तों में
अदिंदियं	(अदिंदिय) 2/1 वि	अतीन्द्रिय को
च	अव्यय	और
पच्छण्णं	(पच्छण्ण) भूकृ 2/1 अनि	छिपे हुए को
सयलं	(सयल) 2/1 वि	सब को
सगं	(सग) 2/1 वि	स्वयं को
च	अव्यय	तथा
इदरं	(इदर) 2/1 वि	अन्य को
तं	(त) 1/1 सवि	वह
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
पच्चक्खं	(पच्चक्ख) 1/1	प्रत्यक्ष

अन्वय– पेच्छदो जं अमुत्तं मुत्तेसु अदिंदियं च पच्छण्णं सगं च इदरं सयलं तं णाणं पच्चक्खं हवदि।

अर्थ– दृष्टा होने के फलस्वरूप जो (ज्ञान) अमूर्त को, मूर्तों (पदार्थों) में अतीन्द्रिय और छिपे हुए को, स्वयं को तथा अन्य सबको (केवल) (जानता है), वह ज्ञान प्रत्यक्ष होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

55. जीवो सयं अमुत्तो मुत्तिगदो तेण मुत्तिणा मुत्तं।
ओगेण्हित्ता जोग्गं जाणदि वा तण्ण जाणादि।।

जीवो	(जीव) 1/1	जीव
सयं	अव्यय	स्वयं
अमुत्तो	(अमुत्तो) 1/1 वि	अमूर्त
•मुत्तिगदो	[(मुत्ति)*-(गद) भूकृ 1/1 अनि]	देह को प्राप्त हुआ
तेण	(त) 3/1 सवि	उसके द्वारा
मुत्तिणा	(मुत्ति) 3/1	देह के द्वारा
मुत्तं	(मुत्त) 2/1 वि	मूर्त को
ओगेण्हित्ता	(ओगेण्ह) संकृ	अवग्रह करके
जोग्गं	(जोग्ग) 2/1 वि	योग्य
जाणदि	(जाण) व 3/1 सक	जानता है
वा	अव्यय	अथवा
तण्ण	अव्यय	वह नहीं
जाणादि[1]	(जाण) व 3/1 सक	जानता है

अन्वय– जीवो सयं अमुत्तो मुत्तिगदो तेण मुत्तिणा जोग्गं मुत्तं ओगेण्हित्ता जाणदि वा तण्ण जाणादि।

अर्थ– जीव स्वयं अमूर्त (है)। देह को प्राप्त हुआ उस देह के द्वारा (इन्द्रिय ज्ञान के) योग्य मूर्त (पदार्थ) को अवग्रह करके जानता है अथवा वह (कभी) नहीं (भी) जानता है।

• यहाँ मुत्ति पुल्लिंग की तरह प्रयुक्त है।

* मुत्ति- स्त्रीलिंग है। (पाइय-सद्द-महण्णवो)

1. वर्तमानकाल के प्रत्ययों के होने पर कभी-कभी अन्त्यस्थ 'अ' के स्थान पर 'आ' हो जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-158 वृत्ति)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

56. फासो रसो य गंधो वण्णो सद्दो य पुग्गला होंति।
अक्खाणं ते अक्खा जुगवं ते णेव गेण्हंति।।

फासो	(फास) 1/1	स्पर्श
रसो	(रस) 1/1	रस
य	अव्यय	और
गंधो	(गंध) 1/1	गंध
वण्णो	(वण्ण) 1/1	वर्ण
सद्दो	(सद्द) 1/1	शब्द
य	अव्यय	और
पुग्गला	(पुग्गल) 1/2	पुद्गल
होंति	(हो) व 3/2 अक	होते हैं
अक्खाणं	(अक्ख) 6/2	इन्द्रियों के
ते	(त) 1/2 सवि	वे
अक्खा	(अप्प) 1/2	इन्द्रियाँ
ते	(त) 2/2 सवि	उनको
जुगवं	अव्यय	एक ही साथ
णेव	अव्यय	नहीं
गेण्हंति	(गेण्ह) व 3/2 सक	ग्रहण करती हैं

अन्वय- फासो रसो गंधो वण्णो य सद्दो अक्खाणं पुग्गला होंति य ते अक्खा ते जुगवं णेव गेण्हंति।

अर्थ- स्पर्श, रस, गंध, वर्ण और शब्द- (ये) (सब) इन्द्रियों के (विषय) पुद्गल होते हैं और वे इन्द्रियाँ उन (विषयों) को एक ही समय में ग्रहण नहीं करती हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

57. परदव्वं ते अक्खा णेव सहावो त्ति अप्पणो भणिदा।
उवलद्धं तेहि कधं पच्चक्खं अप्पणो होदि।।

परदव्वं	[(पर) वि-(दव्व) 1/1]	पर द्रव्य
ते	(त) 1/2 सवि	वे
अक्खा	(अक्ख) 1/2	इन्द्रियाँ
णेव	अव्यय	नहीं
सहावो त्ति	[(सहावो)+(इति)]	
	सहावो (सहाव) 1/1	स्वरूप
	इति (अ) = इसलिए	इसलिए
अप्पणो	(अप्प) 6/1	आत्मा का
भणिदा	(भणिद→भणिदा) भूकृ 1/2	कहा गया
उवलद्धं	(उवलद्ध) भूकृ 1/1 अनि	प्राप्त किया हुआ
तेहि	(त) 3/2 सवि	उनके द्वारा
कधं	अव्यय	कैसे
पच्चक्खं	(पच्चक्ख) 1/1	प्रत्यक्ष
अप्पणो	(अप्प) 4/1	आत्मा के लिए
होदि[1]	(हो) व 3/1 अक	होगा

अन्वय- ते अक्खा परदव्वं त्ति अप्पणो सहावो णेव भणिदा तेहि उवलद्धं अप्पणो पच्चक्खं कधं होदि।

अर्थ- वे इन्द्रियाँ परद्रव्य (हैं), इसलिए (उन्हें) आत्मा का स्वरूप नहीं कहा गया (है)। (तो) उनके द्वारा प्राप्त किया हुआ (ज्ञान) आत्मा के लिए प्रत्यक्ष कैसे होगा (अर्थात् प्रत्यक्ष कैसे कहा जायेगा?)

---

1. प्रश्नवाचक शब्दों के साथ वर्तमानकाल का प्रयोग प्रायः भविष्यत्काल के अर्थ में होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

58. जं परदो विण्णाणं तं तु परोक्खं ति भणिदमट्ठेसु।
जदि केवलेण णादं हवदि हि जीवेण पच्चक्खं।।

जं	(ज) 1/1 सवि	जो
परदो	(परदो) अव्यय	पर से
	पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	
विण्णाणं	(विण्णाण) 1/1	ज्ञान
तं	(त) 1/1 सवि	वह
तु	अव्यय	परन्तु
परोक्खं ति	[(परोक्खं)+(इति)]	
	परोक्खं (परोक्ख) 1/1	परोक्ष
	इति (अ) = ही	ही
भणिदमट्ठेसु	[(भणिदं)+(अट्ठेसु)]	
	(भण→भणिद) भूकृ 1/1	कहा गया
	अट्ठेसु[1] (अट्ठ) 7/2	पदार्थों को
जदि	अव्यय	जो/यदि
केवलेण	(केवल) 3/1 वि	केवल
णादं	(णा) भूकृ 1/1	जाना गया
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
हि	अव्यय	ही
जीवेण	(जीव) 3/1	आत्मा से
पच्चक्खं	(पच्चक्ख) 1/1	प्रत्यक्ष

अन्वय– जं विण्णाणं अट्ठेसु परदो तं परोक्खं ति भणिदं तु पच्चक्खं हवदि जदि केवलेण जीवेण हि णादं।

अर्थ– जो ज्ञान पदार्थों को पर (की सहायता) से (जानता है) वह (तो) परोक्ष ही कहा गया (है), परन्तु (वह) (ज्ञान) प्रत्यक्ष होता है, जो/यदि केवल आत्मा से ही जाना गया (है)।

---

1. कभी-कभी द्वितीया विभक्ति के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-135)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

59. जादं सयं समत्तं णाणमणंतत्थवित्थडं विमलं।
रहिदं तु ओग्गहादिहिं सुहं ति एगंतियं भणियं।।

जादं	(जा) भूक 1/1	उत्पन्न हुआ
सयं	अव्यय	स्वयं
समत्तं	(समत्त) 1/1 वि	पूर्ण
णाणमणंतत्थवित्थडं	[(णाणं)+(अणंत)+ (अत्थवित्थडं)]	
	णाणं (णाण) 1/1	ज्ञान
	{[(अणंत) वि-(अत्थ)- (वित्थड) 1/1] वि}	अनन्त पदार्थों में फैला हुआ
विमलं	(विमल) 1/1 वि	शुद्ध
रहियं	(रहिय) 1/1 वि	रहित
तु	अव्यय	ही
ओग्गहादिहिं	[(ओग्गह)+(आदिहिं)]	
	[(ओग्गह)-(आदि) 3/2]	अवग्रह आदि से
सुहं ति	[(सुहं)+(इति)]	
	सुहं (सुह) 1/1	सुख
	इति (अ) = निश्चय ही	निश्चय ही
एगंतियं	(एगंतिय) 1/1 वि	अद्वितीय
भणियं	(भण→भणिय) भूक 1/1	कहा गया

अन्वय- णाणं सयं तु जादं अणंतत्थवित्थडं समत्तं विमलं ओग्गहादिहिं रहिदं ति एगंतियं सुहं भणियं।

अर्थ- (जो) ज्ञान स्वयं ही उत्पन्न हुआ (है), अनन्त पदार्थों में फैला हुआ (है), पूर्ण (है), शुद्ध (है), अवग्रह (इन्द्रियों से पदार्थ के जानने की पद्धति) आदि (के प्रयोग) से रहित (है) (वह) निश्चय ही अद्वितीय सुख कहा गया (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

60. जं केवलं ति णाणं तं सोक्खं परिणमं च सो (से)[1] चेव।
खेदो तस्स ण भणिदो जम्हा घादी खयं जादा।।

जं	(ज) 1/1 सवि	जो
केवलं ति	[(केवलं)+(इति)]	
	(केवल) 1/1 वि	केवल
	इति (अ) = निश्चय ही	निश्चय ही
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
तं	(त) 1/1 सवि	वह
सोक्खं	(सोक्ख) 1/1	सुख
परिणमं	(परिणम) 1/1	प्रभाव
च	अव्यय	और
सो (से)	(त) 6/1 सवि	उसका
चेव	अव्यय	ही
खेदो	(खेद) 1/1	दुःख
तस्स	(त) 6/1 सवि	उनके
ण	अव्यय	नहीं
भणिदो	(भण→भणिद) भूकृ 1/1	कहा गया
जम्हा	अव्यय	चूँकि
घादी	(घादि) 1/2 वि	घातिया कर्म
खयं	(खय) 2/1	विनाश को
जादा[2]	(जा) भूकृ 1/2	प्राप्त हुए

अन्वय– जं केवलं णाणं तं ति सोक्खं च तस्स परिणमं चेव जम्हा घादी खयं जादा सो खेदो ण भणिदो।

अर्थ– जो केवलज्ञान (है) वह निश्चय ही (स्वयं में) सुख (है) और उसका (लोक में) प्रभाव (भी) (सुख) ही (होता है)। चूँकि (उन) (केवली के) घातिया (कर्म) विनाश को प्राप्त हुए (हैं), (इसलिए) उनके (किसी प्रकार का) दुःख नहीं कहा गया (है)।

1. यहाँ 'सो' के स्थान पर 'से' का प्रयोग होना चाहिये।
2. यहाँ 'जादा' का प्रयोग कर्तृवाच्य में किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

61. णाणं अत्थंतगयं लोयालोएसु वित्थडा दिट्ठी।
णट्ठमणिट्ठं सव्वं इट्ठं पुण जं हि तं लद्धं।।

णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
अत्थंतगयं	[(अत्थ)+(अंतगयं)]	
	[(अत्थ)-(अंत)-	पदार्थों के अंत
	(गय) भूक 1/1 अनि]	को पहुँचा हुआ
लोयालोएसु	[(लोय)+(अलोएसु)]	
	[(लोय)-(अलोअ) 7/2]	लोक और अलोक में
वित्थडा	(वित्थड (स्त्री)→वित्थडा) 1/1 वि	फैला हुआ
दिट्ठी	(दिट्ठि) 1/1	दर्शन
णट्ठमणिट्ठं	[(णट्ठं)+(अणिट्ठं)]	
	णट्ठं (णट्ठ) भूक 1/1 अनि	समाप्त किया गया
	अणिट्ठं (अणिट्ठ) 1/1 वि	अनिष्ट
सव्वं	(सव्व) 1/1 सवि	समस्त
इट्ठं	(इट्ठ) 1/1 वि	वांछित
पुण	अव्यय	चूँकि
जं	(ज) 1/1 सवि	जो
हि	अव्यय	इसलिए
तं	(त) 1/1 सवि	वह
लद्धं	(लद्ध) भूक 1/1 अनि	प्राप्त कर लिया गया

अन्वय– णाणं अत्थंतगयं दिट्ठी लोयालोएसु वित्थडा पुण सव्वं अणिट्ठं णट्ठं हि जं इट्ठं तं लद्धं।

अर्थ– (केवली का) ज्ञान पदार्थों (ज्ञेय) के अंत को पहुँचा हुआ (है) (और) (उनका) दर्शन लोक और अलोक में फैला हुआ (है)। चूँकि (उनके द्वारा) समस्त अनिष्ट समाप्त किया गया (है), इसलिए जो वांछित (है) वह प्राप्त कर लिया गया (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

62. णो सद्दहंति सोक्खं सुहेसु परमं ति विगदघादीणं।
सुणिदूण ते अभव्वा भव्वा वा तं पडिच्छंति।।

णो	अव्यय	नहीं
सद्दहंति	(सद्दह) व 3/2 सक	श्रद्धा करते हैं
सोक्खं	(सोक्ख) 1/1	सुख
सुहेसु	(सुह) 7/2	सुखों में
परमं ति	[(परमं)+(इति)]	
	परमं (परम) 1/1 वि	उत्कृष्ट
	इति (अ) = निश्चय ही	निश्चय ही
विगदघादीणं[1]	[(विगद) भूकृ अनि-	नष्ट कर दिया
	(घादि) 6/2 वि]	घातिया कर्म को
सुणिदूण	(सुण) संकृ	सुनकर
ते	(त) 1/2 सवि	वे
अभव्वा	(अभव्व) 1/2 वि	अभव्य
भव्वा	(भव्व) 1/2 वि	भव्य
वा	अव्यय	और
तं	(त) 2/1 सवि	उसको
पडिच्छंति	(पडिच्छ) व 3/2 सक	स्वीकार करते हैं

अन्वय– विगदघादीणं सोक्खं सुहेसु ति परमं सुणिदूण णो सद्दहंति ते अभव्वा वा तं पडिच्छंति भव्वा।

अर्थ– (जिन्होंने) घातिया कर्म को नष्ट कर दिया (है) (उनका) सुख (सब) सुखों में निश्चय ही उत्कृष्ट (होता है)। (यह) सुनकर (जो) (उनके प्रति) श्रद्धा नहीं करते हैं, वे अभव्य (समत्व से दूर) (हैं) और (जो) उसको स्वीकार करते हैं (वे) भव्य (समत्व प्राप्त करनेवाले) (हैं)।

---

1. कभी-कभी द्वितीया विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-134)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

63. मणुयासुरामरिंदा अहिदुदा इन्दियेहिं सहजेहिं।
असहंता तं दुक्खं रमंति विसएसु रम्मेसु।।

मणुयासुरामरिंदा	[(मणुय)+(असुर)+(अमरिंदा)]	
	[(मणुय)-(असुर)-	मनुष्य, असुर और
	(अमरिंद) 1/2]	देवों के राजा
अहिदुदा	(अहिदुद) भूकृ 1/2 अनि	दुःख का अनुभव किये हुए
इन्दियेहिं	(इन्दिय) 3/2	इन्द्रियों से
सहजेहिं	(सहज) 3/2 वि	प्रकृतिदत्त
असहंता	(अ-सह) वकृ 1/2	सहन न करते हुए
तं	(त) 2/1 सवि	उस
दुक्खं	(दुक्ख) 2/1	दुःख को
रमंति	(रम) व 3/2 अक	रमण करते हैं
विसएसु	(विसय) 7/2	विषयों में
रम्मेसु	(रम्म) 7/2 वि	रमणीय

अन्वय- सहजेहिं इन्दियेहिं अहिदुदा मणुयासुरामरिंदा तं दुक्खं असहंता रम्मेसु विसएसु रमंति।

अर्थ- प्रकृतिदत्त इन्द्रियों से (अतृप्तिरूपी) दुःख का अनुभव किये हुए मनुष्य, असुर और देवों के राजा उस दुःख को सहन न करते हुए (इन्द्रिय योग्य) रमणीय विषयों में रमण करते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

64. जेसिं विसयेसु रदी तेसिं दुक्खं वियाण सब्भावं।
जइ तं ण हि सब्भावं वावारो णत्थि विसयत्थं।।

जेसिं	(ज) 6/2 सवि	जिनकी
विसयेसु	(विसअ) 7/2	विषयों में
रदी	(रदि) 1/1	रति
तेसिं	(त) 6/2 सवि	उनके
दुक्खं	(दुक्ख) 2/1	दुःख को
वियाण	(वियाण) विधि 2/1 सक	जानो
सब्भावं	(सब्भाव) 2/1 अव्यय	स्वभाव से
जइ	अव्यय	यदि
तं	(त) 1/1 सवि	वह
ण	अव्यय	नहीं
हि	अव्यय	क्योंकि
सब्भावं	(सब्भाव) 2/1 अव्यय	स्वभाव से
वावारो	(वावार) 1/1	प्रयत्न
णत्थि	[(ण)+(अत्थि)]	
	ण (अ) = नहीं	नहीं
	अत्थि (अस) व 3/1 अक	होता है
विसयत्थं	अव्यय	विषयों के लिए

अन्वय– जेसिं विसयेसु रदी तेसिं दुक्खं सब्भावं वियाण हि जइ तं ण सब्भावं विसयत्थं वावारो णत्थि।

अर्थ– जिन (जीवों) की (इन्द्रिय)-विषयों में रति (आसक्ति) (है) उनके दुःख को स्वभाव से (प्राकृतिक) जानो, क्योंकि यदि वह (दुःख) स्वभाव से (प्राकृतिक) नहीं होता (तो) विषयों के लिए प्रयत्न नहीं होता।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

65. पप्पा इट्ठे विसये फासेहिं समस्सिदे सहावेण।
परिणममाणो अप्पा सयमेव सुहं ण हवदि देहो।।

पप्पा	(पप्पा) संकृ अनि	प्राप्त करके
इट्ठे	(इट्ठ) 2/2 वि	वांछित
विसये	(विसय) 2/2	विषयों को
फासेहिं[1]	(फास) 3/2	स्पर्शन आदि इन्द्रियों पर
समस्सिदे	(समस्सिद) 2/2 वि	पूर्णतः निर्भर
सहावेण	(सहावेण) तृतीयार्थक अव्यय	स्वभावपूर्वक
परिणममाणो	(परिणम) वकृ 1/1	रूपान्तरण करता हुआ
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा
सयमेव	[(सयं)+(एव)]	
	सयं (अ) = स्वयं	स्वयं
	एव (अ) = ही	ही
सुहं	(सुह) 2/1	सुख को
ण	अव्यय	नहीं
हवदि[2]	(हव) व 3/1 सक	प्राप्त करता है
देहो	(देह) 1/1	देह

अन्वय– फासेहिं समस्सिदे इट्ठे विसये पप्पा अप्पा एव सयं सहावेण परिणममाणो सुहं हवदि देहो ण।

अर्थ– स्पर्शन आदि इन्द्रियों पर पूर्णतः निर्भर वांछित विषयों को प्राप्त करके आत्मा ही स्वयं (अपने) (अशुद्ध) स्वभावपूर्वक रूपान्तरण करता हुआ सुख को प्राप्त करता है, देह नहीं।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर तृतीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)
2. 'हव' क्रिया सकर्मक की तरह भी प्रयुक्त होती है। (पाइय-सद्द-महण्णवोः पृ. 943)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

66. एगंतेण हि देहो सुहं ण देहिस्स कुणदि सग्गे वा।
विसयवसेण दु सोक्खं दुक्खं वा हवदि सयमादा।।

एगंतेण	(एगंत) 3/1 अव्यय	आवश्यकरूप से
हि	अव्यय	निश्चय ही
देहो	(देह) 1/1	शरीर
सुहं	(सुह) 2/1	सुख को
ण	अव्यय	नहीं
देहिस्स	(देहि) 4/1 वि	शरीरधारी के लिए
कुणदि	(कुण) व 3/1 सक	करता है
सग्गे	(सग्ग) 7/1	स्वर्ग में
वा	अव्यय	भी
विसयवसेण	(विसयवस) 3/1 वि	विषयों के अधीन होने के कारण
दु	अव्यय	परन्तु
सोक्खं	(सोक्ख) 2/1	सुख को
दुक्खं	(दुक्ख) 2/1	दुःख को
वा	अव्यय	अथवा
हवदि[1]	(हव) व 3/1 सक	प्राप्त करता है
सयमादा	[(सयं)+(आदा)]	
	सयं (अ) = स्वयं	स्वयं
	आदा (आद) = आत्माआत्मा	

अन्वय– एगंतेण देहो सग्गे वा देहिस्स हि सुहं ण कुणदि दु विसयवसेण आदा सयं सोक्खं वा दुक्खं हवदि ।

अर्थ– आवश्यकरूप से शरीर स्वर्ग में भी शरीरधारी के लिए निश्चय ही सुख नहीं करता है, परन्तु विषयों के अधीन होने के कारण आत्मा स्वयं सुख अथवा दुःख को प्राप्त करता है।

---

1. 'हव' क्रिया सकर्मक की तरह भी प्रयुक्त होती है। (पाइय-सद्द-महण्णवोः पृ. 943)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

67. तिमिरहरा जइ दिट्ठी जणस्य दीवेण णत्थि कायव्वं।
तह सोक्खं सयमादा विसया किं तत्थ कुव्वंति।।

तिमिरहरा	[(तिमिरहर) (स्त्री)→तिमिरहरा) 1/1 वि]	अंधकार को हटानेवाली
जइ	अव्यय	यदि
दिट्ठी	(दिट्ठि) 1/1	देखने की शक्ति
जणस्य[1]	(जण) 6/1	प्राणी की
दीवेण	(दीव) 3/1	दीपक से
णत्थि	अव्यय	नहीं
कायव्वं	(कायव्व) विधिकृ 1/1 अनि	किया जा सकता
तह	अव्यय	उसी प्रकार
सोक्खं	(सोक्ख) 1/1	सुख
सयमादा	[(सयं)+(आदा)]	
	सयं (अ) = स्वयं	स्वयं
	आदा (आद) = आत्मा	आत्मा
विसया	*(विसय) 1/2*	*विषय*
किं	(क) 2/1 सवि	क्या
तत्थ	अव्यय	वहाँ
कुव्वंति[2]	(कुव्व) व 3/2 सक	करेंगे

अन्वय– जइ जणस्य दिट्ठी तिमिरहरा दीवेण णत्थि कायव्वं तह आदा सयं सोक्खं तत्थ विसया किं कुव्वंति।

अर्थ– यदि (किसी) प्राणी में देखने की शक्ति अंधकार को हटानेवाली (है) (तो) दीपक से (कुछ भी) नहीं किया जा सकता। उसी प्रकार (जब) आत्मा स्वयं (ही) सुख (है) (तो) वहाँ (इन्द्रिय)- विषय क्या (कार्य) करेंगे?

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-134)
2. प्रश्नवांचक शब्दों के साथ वर्तमानकाल का प्रयोग प्रायः भविष्यत्काल के अर्थ में होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

68. सयमेव जहादिच्चो तेजो उण्हो य देवदा णभसि।
सिद्धो वि तहा णाणं सुहं च लोगे तहा देवो।।

सयमेव	[(सयं)+(एव)]	
	सयं (अ) = स्वयं	स्वयं
	एव (अ) = ही	ही
जहादिच्चो	[(जह)+(आदिच्चो)]	
	जह (अ) = जिस प्रकार	जिस प्रकार
	आदिच्चो (आदिच्च) 1/1	सूर्य
तेजो	(तेज) 1/1	प्रकाश
उण्हो	(उण्ह) 1/1	ताप
य	अव्यय	और
देवदा	(देवदा) 1/1	देव
णभसि	(णभसि) 7/1 अनि	आकाश में
सिद्धो	(सिद्ध) 1/1	मुक्त पुरुष
वि	अव्यय	भी
तहा	अव्यय	उसी प्रकार
णाणं	(णाण) 1/1	ज्ञान
सुहं	(सुह) 1/1	सुख
च	अव्यय	पादपूरक
लोगे	(लोग) 7/1	लोक में
तहा	अव्यय	और
देवो	(देव) 1/1	देव

अन्वय– जह आदिच्चो णभसि सयं एव तेजो उण्हो य देवदा तहा लोगे सिद्धो वि णाणं च सुहं तहा देवो।

अर्थ– जिस प्रकार सूर्य आकाश में स्वयं ही प्रकाश, ताप और देव (है), उसी प्रकार लोक में मुक्त पुरुष भी ज्ञान, सुख और देव (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

69. देवदजदिगुरुपूजासु चेव दाणम्मि वा सुसीलेसु।
उववासादिसु रत्तो सुहोवओगप्पगो अप्पा।।

देवदजदिगुरुपूजासु	[(देवद)-(जदि)-(गुरु)-(पूजा) 7/2]	देवता, मुनि और गुरु की भक्ति में
चेव	अव्यय	और
दाणम्मि	(दाण) 7/1	दान में
वा	अव्यय	तथा
सुसीलेसु	(सुसील) 7/2	श्रेष्ठ आचरण में
उववासादिसु	[(उववास)+(आदिसु)] [(उववास)-(आदि) 7/2]	उपवास आदि में
रत्तो	(रत्त) भूकृ 1/1 अनि	अनुरक्त
सुहोवओगप्पगो	[(सुह)+(उवओगप्पग)] [(सुह) वि-(उवओगप्पग) 1/1 वि]	शुभोपयोगात्मक
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा

अन्वय– देवदजदिगुरुपूजासु चेव दाणम्मि वा सुसीलेसु उववासादिसु रत्तो अप्पा सुहोवओगप्पगो।

अर्थ– देवता (अरहंत, सिद्ध), गुरु (आचार्य, उपाध्याय) और मुनि (साधु) की भक्ति में, दान में, श्रेष्ठ आचरण में तथा उपवास आदि में अनुरक्त आत्मा शुभोपयोगात्मक (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

70. जुत्तो सुहेण आदा तिरियो वा माणुसो व देवो वा।
भूदो तावदि कालं लहदि सुहं इन्दियं विविहं।।

जुत्तो	(जुत्त) भूक 1/1 अनि	युक्त
सुहेण	(सुह) 3/1 वि	शुभ (उपयोग) से
आदा	(आद) 1/1	आत्मा
तिरियो	(तिरिय) 1/1	तिर्यंच
वा	अव्यय	या
माणुसो	(माणुस) 1/1	मनुष्य
व	अव्यय	या
देवो	(देव) 1/1	देव
वा	अव्यय	तथा
भूदो	(भूद) भूक 1/1 अनि	हुआ
तावदि[1]	(तावदि) 7/1 वि अनि	उतने तक
कालं	(काल) 2/1	समय
लहदि	(लह) व 3/1 सक	प्राप्त करता है
सुहं	(सुह) 2/1	सुख को
इन्दियं	(इन्दिय) 2/1	इन्द्रिय
विविहं	(विविह) 2/1 वि	नाना प्रकार के

अन्वय- सुहेण जुत्तो आदा तिरियो वा माणुसो व देवो वा भूदो तावदि कालं विविहं इन्दियं सुहं लहदि।

अर्थ- (जो) शुभ (उपयोग) से युक्त (होता है) (वह) आत्मा या (तो) तिर्यंच या मनुष्य या देव हुआ (है) तथा (वह) उतने समय तक नाना प्रकार के इन्द्रियसुख को प्राप्त करता है।

---

1. कभी-कभी द्वितीया विभक्ति के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है और कालवाची शब्दों में द्वितीया का प्रयोग होता है।
(हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-135)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

71. सोक्खं सहावसिद्धं णत्थि सुराणं पि सिद्धमुवदेसे।
ते देहवेदणट्टा रमंति विसएसु रम्मेसु।।

सोक्खं	(सोक्ख) 1/1	सुख
सहावसिद्धं	[(सहाव)-(सिद्ध)	स्वभाव से
	भूकृ 1/1 अनि]	निष्पन्न (उत्पन्न)
णत्थि	अव्यय	नहीं है
सुराणं	(सुर) 6/2	देवताओं के
पि	अव्यय	भी
सिद्धमुवदेसे[1]	[(सिद्धं)+(उवदेसे)]	
	सिद्धं (सिद्ध) भूकृ 1/1 अनि	प्रमाणित
	उवदेसे (उवदेस) 7/1	उपदेश से
ते	(त) 1/2 सवि	वे
देहवेदणट्टा	[(देहवेदण)+(अट्टा)]	
	[(देह)-(वेदणा→वेदण)[2]-	शरीर के संताप से
	(अट्ट) भूकृ 1/2 अनि]	पीड़ित
रमंति	(रम) व 3/2 अक	रमण करते हैं
विसएसु	(विसय) 7/2	विषयों में
रम्मेसु	(रम्म) 7/2 वि	रमणीय

अन्वय- उवदेसे सिद्धं सुराणं पि सहावसिद्धं सोक्खं णत्थि ते देहवेदणट्टा रम्मेसु विसएसु रमंति।

अर्थ- (जिनेन्द्रदेव के) उपदेश से (यह) प्रमाणित है (कि) देवताओं के भी (मूल) स्वभाव से निष्पन्न (उत्पन्न) सुख नहीं है। (चूँकि) वे शरीर के संताप से पीड़ित (रहते हैं) (इसलिये) रमणीय विषयों में रमण करते हैं।

---

1. *कभी-कभी तृतीया विभक्ति के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है।* (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-135)
2. यहाँ छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'वेदणा' के स्थान पर 'वेदण' किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

72. णरणारयतिरियसुरा भजंति जदि देहसंभवं दुक्खं।
किह सो सुहो व असुहो उवओगो हवदि जीवाणं।।

णरणारयतिरियसुरा	[(णर)-(णारय) वि-(तिरिय)-(सुर) 1/2]	मनुष्य, नारकी, तिर्यंच और देव
भजंति	(भज) व 3/2 सक	भोगते हैं
जदि	अव्यय	यदि
देहसंभवं	[(देह)-(संभव)[1] 2/1 वि]	देह से उत्पन्न
दुक्खं	(दुक्ख) 2/1	दुःख को
किह	अव्यय	कैसे
सो	(त) 1/1 सवि	वह
सुहो	(सुह) 1/1 वि	शुभ
व	अव्यय	तथा
असुहो	(असुह) 1/1 वि	अशुभ
उवओगो	(उवओग) 1/1	उपयोग
हवदि[2]	(हव) व 3/1 अक	होगा
जीवाणं	(जीव) 4/2	जीवों के लिए

अन्वय– जदि णरणारयतिरियसुरा देहसंभवं दुक्खं भजंति जीवाणं सो उवओगो सुहो व असुहो किह हवदि।

अर्थ– यदि मनुष्य, नारकी, तिर्यंच और देव (ये सभी) देह से (ही) उत्पन्न दुःख को भोगते हैं (तो) जीवों के लिए (प्रतिपादित) वह उपयोग शुभ तथा अशुभ कैसे होगा?

---

1. यहाँ 'संभव' शब्द विशेषण की तरह प्रयुक्त हुआ है।
2. प्रश्नवाचक शब्दों के साथ वर्तमानकाल का प्रयोग प्रायः भविष्यत्काल के अर्थ में होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

73. कुलिसाउहचक्कधरा सुहोवओगप्पगेहिं भोगेहिं।
देहादीणं विद्धिं करेंति सुहिदा इवाभिरदा।।

कुलिसाउहचक्कधरा	[(कुलिसाउह)-(चक्कधर) 1/2 वि]	वज्रायुध धारण करनेवाले तथा चक्र धारण करनेवाले
सुहोवओगप्पगेहिं	[(सुह)+(उवओगप्पग)] [(सुह)-(उवओगप्पग) 3/2 वि]	शुभ उपयोगस्वभाववाले होने के कारण
भोगेहिं	(भोग) 3/2	धन-सम्पत्ति से
देहादीणं	[(देह)+(आदीणं)] [(देह)-(आदि) 6/2]	शरीर तथा इससे सम्बन्धित अन्य वस्तुओं की
विद्धिं	(विद्धि) 2/1	बढ़ोतरी
करेंति	(कर) व 3/2 सक	करते हैं
सुहिदा	(सुहिद) 1/2 वि	सुखी
इवाभिरदा	[(इव)+(अभिरदा)]	
	इव (अ)= मानो	मानो
	अभिरदा (अभिरद) भूकृ 1/2 अनि	अत्यन्त आसक्त

अन्वय– कुलिसाउहचक्कधरा सुहोवओगप्पगेहिं भोगेहिं देहादीणं विद्धिं करेंति अभिरदा इव सुहिदा।

अर्थ– वज्रायुध धारण करनेवाले (इन्द्र) तथा चक्र धारण करनेवाले (चक्रवर्ती) शुभ उपयोगस्वभाववाले होने के कारण धन-सम्पत्ति से शरीर तथा इससे सम्बन्धित अन्य वस्तुओं की बढ़ोतरी करते हैं (और) (उनमें) अत्यन्त आसक्त (रहते हैं) मानो (वे) (अमिट रूप से) सुखी (हैं)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

74. जदि संति हि पुण्णाणि य परिणामसमुब्भवाणि विविहाणि।
जणयंति विसयतण्हं जीवाणं देवदंताणं।।

जदि	अव्यय	यदि
संति	(संति) व 3/2 अक अनि	विद्यमान हैं
हि	अव्यय	निश्चय ही
पुण्णाणि	(पुण्ण) 1/2	पुण्य
य	अव्यय	पादपूर्ति
परिणामसमुब्भवाणि[1]	[(परिणाम)-(समुब्भव) 1/2 वि]	परिणाम से उत्पन्न
विविहाणि	(विविह) 1/2 वि	नाना प्रकार के
जणयंति	(जणय) व 3/2 सक अनि	उत्पन्न करते हैं
विसयतण्हं	[(विसय)-(तण्हा) 2/1]	विषय-तृष्णा
जीवाणं[1]	(जीव) 6/2	जीवों में
देवदंताणं	[(देवदा)+(अंताणं)] [(देवदा)-(अंत) 6/2]	देवों तक के

अन्वय– जदि य परिणामसमुब्भवाणि विविहाणि पुण्णाणि संति देवदंताणं जीवाणं विसयतण्हं हि जणयंति।

अर्थ– यदि (शुभोपयोगरूप) परिणाम से उत्पन्न नाना प्रकार के पुण्य विद्यमान हैं (तो) (वे) (पुण्य) देवों तक के (सभी) जीवों में विषय-तृष्णा निश्चय ही उत्पन्न करते हैं (करेंगे ही)।

---

1. यहाँ 'समुब्भव' शब्द का प्रयोग नपुंसकलिंग के रूप में हुआ है, जबकि कोश में 'समुब्भव' पुलिंग शब्द बताया गया है।
2. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-134)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

75. ते पुण उदिण्णतण्हा दुहिदा तण्हाहिं विसयसोक्खाणि।
इच्छंति अणुभवंति य आमरणं दुक्खसंतत्ता।।

ते	(त) 1/2 सवि	वे
पुण	अव्यय	फिर भी
उदिण्णतण्हा	[(उदिण्ण) भूक़ अनि-	उत्पन्न हुई
	(तण्हा) 1/2]	तृष्णाएँ
दुहिदा	(दुहिद) 1/2 वि	दुःखी
तण्हाहिं	(तण्हा) 3/2	तृष्णाओं के कारण
विसयसोक्खाणि	[(विसय)-(सोक़्ख) 2/2]	विषय-सुखों को
इच्छंति	(इच्छ) व 3/2 सक	चाहते हैं
अणुभवंति	(अणुभव) व 3/2 सक	भोगते हैं
य	अव्यय	तथा
आमरणं	(आ-मरण) 1/1	मरण-तक
दुक्खसंतत्ता	[(दुक्ख)-(संतत्त)	दुःखों से अत्यन्त
	भूक़ 1/2 अनि]	पीड़ित

अन्वय- उदिण्णतण्हा ते तण्हाहिं दुहिदा दुक्खसंतत्ता पुण विसयसोक्खाणि इच्छंति य आमरणं अणुभवंति।

अर्थ- (जिनमें) तृष्णाएँ उत्पन्न हुई हैं, वे तृष्णाओं के कारण दुःखी (रहते हैं)। दुःखों से अत्यन्त पीड़ित (भी) (होते हैं), फिर भी (इन्द्रिय)- विषय सुखों को चाहते हैं तथा मरण-तक (उनको) भोगते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

76. सपरं बाधासहियं विच्छिण्णं बंधकारणं विसमं।
जं इंदियेहिं लद्धं तं सोक्खं दुक्खमेव तहा।।

सपरं	[(स)-(पर) 1/1 वि]	पर की अपेक्षा रखनेवाला
बाधासहियं	[(बाधा)-(सहिय) भूकृ 1/1 अनि]	अड़चनों सहित
विच्छिण्णं	(विच्छिण्ण) भूकृ 1/1 अनि	हस्तक्षेप/समाप्त किया गया
बंधकारणं	[(बंध)-(कारण) 1/1]	(कर्म) बंध का कारण
विसमं	(विसम) 1/1 वि	कष्टदायक
जं	अव्यय	चूँकि
इंदियेहिं	(इन्दिय) 3/2	इन्द्रियों से
लद्धं	(लद्ध) भूकृ 1/1 अनि	प्राप्त
तं	अव्यय	इसलिए
सोक्खं	(सोक्ख) 1/1	सुख
दुक्खमेव	[(दुक्खं)+(एव)]	
	दुक्खं (दुक्ख) 1/1	दुःख
	एव (अ)= ही	ही
तहा	अव्यय	उस (पूर्वोक्त) रीति से

अन्वय– जं इंदियेहिं लद्धं सपरं बाधासहियं विच्छिण्णं बंधकारणं विसमं तं तहा सोक्खं दुक्खमेव।

अर्थ– चूँकि इन्द्रियों से प्राप्त (सुख) पर की अपेक्षा रखनेवाला (पराश्रित), अड़चनों सहित, हस्तक्षेप/समाप्त किया गया, (परेशानी में डालनेवाले) कर्मबंध का कारण, (और) (अन्त में) कष्टदायक (होता) (है) इसलिए उस (पूर्वोक्त) रीति से (ऐसा) सुख दुःख ही (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

77. **ण हि मण्णदि जो एवं णत्थि विसेसो त्ति पुण्णपावाणं।**
हिंडदि घोरमपारं संसारं मोहसंछण्णो।।

ण	अव्यय	नहीं
हि	अव्यय	पादपूरक
मण्णदि	(मण्ण) व 3/1 सक	मानता है
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
एवं	अव्यय	इस प्रकार
णत्थि	अव्यय	नहीं है
विसेसो त्ति	[(विसेसो)+(इति)]	
	विसेसो (विसेस) 1/1	भेद
	इति (अ) = पादपूरक	पादपूरक
पुण्णपावाणं[1]	[(पुण्ण)-(पाव) 6/2]	पुण्य और पाप में
हिंडदि	(हिंड) व 3/1 सक	परिभ्रमण करता है
घोरमपारं[2]	[(घोरं)+(अपारं)]	
	घोरं (घोर) 2/1 वि	भयानक
	अपारं (अपार) 2/1 वि	अनन्त
संसारं[2]	(संसार) 2/1	संसार में
मोहसंछण्णो	[(मोह)-(संछण्ण)	आत्मविस्मृति/
	भूकृ 1/1 अनि]	देहतादात्म्यभाव से
		पूर्णतः ढँका हुआ

अन्वय– पुण्णपावाणं विसेसोत्ति हि णत्थि जो एवं ण मण्णदि मोहसंछण्णो घोरमपारं संसारं हिंडदि।

अर्थ– पुण्य और पाप में भेद नही (होता) है, जो इस प्रकार नहीं मानता है, (वह) आत्मविस्मृति/देहतादात्म्यभाव से पूर्णतः ढँका हुआ अनन्त (दुःखदायी) भयानक संसार में परिभ्रमण करता है।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-134)
2. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137) या गत्यार्थक क्रिया के योग में द्वितीया भी होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

78. एवं विदिदत्थो जो दव्वेसु ण रागमेदि दोसं वा।
उवओगविसुद्धो सो खवेदि देहुब्भवं दुक्खं।।

एवं	अव्यय	इस प्रकार
विदिदत्थो	[(विदिद)+(अत्थो)]	
	[(विदिद) भूकृ अनि	जान लिया गया
	(अत्थ) 1/1]	परमार्थ
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
दव्वेसु	(दव्व) 7/2	द्रव्यों में
ण	अव्यय	नहीं
रागमेदि	[(रागं)+(एदि)]	
	रागं (राग) 2/1	राग
	एदि (ए) व 3/1 सक	करता है
दोसं	(दोस) 2/1	द्वेष
वा	अव्यय	या
उवओगविसुद्धो	[(उवओग)-(विसुद्ध)1/1 वि]	उपयोग से शुद्ध
सो	(त) 1/1 सवि	वह
खवेदि	(खव) व 3/1 सक	नाश करता है
देहुब्भवं	[(देह)+(उब्भव)]	देह (तादात्म्यभाव) से
	[(देह)-(उब्भव)[1]2/1 वि]	उत्पन्न
दुक्खं	(दुक्ख) 2/1	दुःख

अन्वय– एवं विदिदत्थो जो दव्वेसु ण रागं वा दोसं एदि सो उवओगविसुद्धो देहुब्भवं दुक्खं खवेदि।

अर्थ– इस प्रकार (जिसके द्वारा) परमार्थ जान लिया गया (है), जो (आत्मा) द्रव्यों (संपत्ति/वस्तुओं/व्यक्तियों) में राग (आसक्ति) या द्वेष (शत्रुता) नहीं करता है, वह (आत्मा) उपयोग से शुद्ध (हो जाता है) (और) देह (तादात्म्यभाव) से उत्पन्न दुःख का नाश करता है।

1. प्रायः समास के अन्त में 'से उत्पन्न' अर्थ को प्रकट करता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

79. चत्ता पावारंभं समुट्ठिदो वा सुहम्मि चरियम्हि।
ण जहदि जदि मोहादी ण लहदि सो अप्पगं सुद्धं।।

चत्ता	(चत्ता) संकृ अनि	छोड़कर
पावारंभं	[(पाव)+(आरंभं)]	
	[(पाव)-(आरंभ) 2/1]	पापकर्म को
समुट्ठिदो	(समुट्ठिद) भूकृ 1/1 अनि	उचित प्रकार से प्रयत्नशील/उठा हुआ
वा	अव्यय	भी
सुहम्मि	(सुह) 7/1 वि	शुभ में
चरियम्हि	(चरिय) 7/1	चारित्र में
ण	अव्यय	नहीं
जहदि	(जह) व 3/1 सक	छोड़ता है
जदि	अव्यय	यदि
मोहादी	[(मोह)+(आदी)]	
	[(मोह)-(आदि) 2/2]	मोह आदि को
ण	अव्यय	नहीं
लहदि	(लह) व 3/1 सक	प्राप्त करता है
सो	(त) 1/1 सवि	वह
अप्पगं	(अप्पग) 2/1	आत्मा को
सुद्धं	(सुद्ध) 2/1 वि	शुद्ध

अन्वय- पावारंभं चत्ता सुहम्मि चरियम्हि समुट्ठिदो वा जदि मोहादी ण जहदि सो सुद्धं अप्पगं ण लहदि।

अर्थ- (जो) पापकर्म छोड़कर शुभ चारित्र में उचित प्रकार से प्रयत्नशील/उठा हुआ भी यदि (आत्मा) मोह (आत्मविस्मृति, देहतादात्म्यभाव, आसक्ति, शत्रुता) आदि नहीं छोड़ता है (तो) वह शुद्धात्मा को प्राप्त नहीं करता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

80. जो जाणदि अरहंतं दव्वत्तगुणत्तपज्जयत्तेहिं।
सो जाणदि अप्पाणं मोहो खलु जादि तस्स लयं।।

जो	(ज) 1/1 सवि	जो
जाणदि	(जाण) व 3/1 सक	जानता है
अरहंतं	(अरहंत) 2/1	अरिहंत को
दव्वत्तगुणत्त-	[(दव्वत्त)-(गुणत्त)-	द्रव्यत्व, गुणत्व
पज्जयत्तेहिं	(पज्जयत्त) 3/2 वि]	और पर्यायत्व से
सो	(त) 1/1 सवि	वह
जाणदि	(जाण) व 3/1 सक	जानता है
अप्पाणं	(अप्पाण) 2/1	आत्मा को
मोहो	(मोह) 1/1	मोह
खलु	अव्यय	निश्चय ही
जादि	(जा) व 3/1 सक	पहुँच जाता है
तस्स	(त) 6/1 सवि	उसका
लयं	(लय) 2/1	समाप्ति को

अन्वय- जो अरहंतं दव्वत्तगुणत्तपज्जयत्तेहिं जाणदि सो अप्पाणं जाणदि तस्स मोहो खलु लयं जादि।

अर्थ- जो अरिहंत को द्रव्यत्व, गुणत्व और पर्यायत्व अर्थात् (मूलस्वभाव) से जानता है, वह आत्मा को जानता है, (और) उसका मोह (आत्मविस्मृति भाव) निश्चय ही समाप्ति को पहुँच जाता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

81. जीवो ववगदमोहो उवलद्धो तच्चमप्पणो सम्मं।
जहदि जदि रागदोसे सो अप्पाणं लहदि सुद्धं।।

जीवो	(जीव) 1/1	जीव
ववगदमोहो	[(ववगद) भूक अनि-	समाप्त कर दिया गया
	(मोह) 1/1]	मोह
उवलद्धो[1]	(उवलद्ध) भूक 1/1 अनि	समझ लिया
तच्चमप्पणो	[(तच्चं)+(अप्पणो)]	
	तच्चं (तच्च) 2/1	सार को
	अप्पणो (अप्प) 6/1	आत्मा के
सम्मं	अव्यय	अच्छी तरह
जहदि	(जह) व 3/1 सक	छोड़ता है
जदि	अव्यय	यदि
रागदोसे	[(राग)-(दोस) 2/2]	राग-द्वेष
सो	(त) 1/1 सवि	वह
अप्पाणं	(अप्पाण) 2/1	आत्मा को
लहदि	(लह) व 3/1 सक	प्राप्त करता है
सुद्धं	(सुद्ध) 2/1 वि	शुद्ध

अन्वय– **ववगदमोहो अप्पणो तच्चं सम्मं उवलद्धो सो जीवो जदि रागदोसे जहदि सुद्धं अप्पाणं लहदि।**

अर्थ– (जिसके द्वारा) मोह (आत्मविस्मृति भाव) समाप्त कर दिया गया (है) (तथा) (जिसने) आत्मा के सार (मूल स्वभाव) को अच्छी तरह समझ लिया (है), वह जीव यदि राग-द्वेष (अशुद्धभाव) छोड़ता है (तो) शुद्धात्मा को प्राप्त करता है।

---

1. यहाँ भूतकालिक कृदन्त का प्रयोग कर्तृवाच्य में किया गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

82. सव्वे वि य अरहंता तेण विधाणेण खविदकम्मंसा।
किच्चा तधोवदेसं णिव्वादा ते णमो तेसिं।।

सव्वे	(सव्व) 1/2 सवि	सब
वि	अव्यय	ही
य	अव्यय	और
अरहंता	(अरहंत) 1/2	अरिहंतों
तेण	(त) 3/1 सवि	उसी
विधाणेण	(विधाण) 3/1	रीति से
खविदकम्मंसा	[(खविदकम्म)+(अंस)]	
	[(खविद)[1] भूकृ अनि-	समाप्त किया
	(कम्म)-(अंस) 2/2]	कर्म-खंडों को
किच्चा	(किच्चा) संकृ अनि	करके
तधोवदेसं	[(तध)+(उवदेस)]	
	तध (अ)= उसी प्रकार	उसी प्रकार
	उवदेसं (उवदेस) 2/1	उपदेश
णिव्वादा	(णिव्वाद) भूकृ 1/2 अनि	संतृप्त हुए
ते	(त) 1/2 सवि	वे
णमो[2]	अव्यय	नमस्कार
तेसिं	(त) 4/2 सवि	उनको

अन्वय– सव्वे वि अरहंता तेण विधाणेण कम्मंसा खविद य तध उवदेसं किच्चा ते णिव्वादा तेसिं णमो।

अर्थ– सब ही अरिहंतों ने उसी रीति से कर्म-खंडों को समाप्त किया और उसी प्रकार उपदेश करके वे (अरिहंत) संतृप्त (मुक्त) हुए, उनको नमस्कार।

---

1. भूतकालिक कृदन्त का प्रयोग कर्तृवाच्य में किया गया है
2. 'णमो' के योग में चतुर्थी होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

83. दव्वादिएसु मूढो भावो जीवस्स हवदि मोहो त्ति।
खुब्भदि तेणुच्छण्णो पप्पा रागं व दोसं वा।।

दव्वादिएसु	[(दव्व)+(आदिएसु)]	
	[(दव्व)-(आदि) 'अ' स्वार्थिक 7/2]	द्रव्यादि में
मूढो	(मूढ) 1/1 वि	संशयात्मक
भावो	(भाव) 1/1	भाव
जीवस्स	(जीव) 6/1	जीव के
हवदि	(हव) व 3/1 अक	होता है
मोहोत्ति	[(मोहो)+(इति)]	
	मोहो (मोह) 1/1	मोह
	इति (अ) = इस प्रकार	इस प्रकार
खुब्भदि	(खुब्भ) व 3/1 अक	व्याकुल होता है
तेणुच्छण्णो	[(तेण)+(उच्छण्णो)]	
	तेण (त) 3/1 सवि	उससे
	उच्छण्णो (उच्छण्ण) भूकृ 1/1 अनि	ढँका हुआ
पप्पा	(पप्पा) संकृ अनि	प्राप्त करके
रागं	(राग) 2/1	राग को
व	अव्यय	अथवा
दोसं	(दोस) 2/1	द्वेष को
वा	अव्यय	अथवा

अन्वय– जीवस्स दव्वादिएसु मूढो भावो हवदि मोहो त्ति तेणुच्छण्णो रागं व दोसं वा पप्पा खुब्भदि।

अर्थ– (यदि) जीव के द्रव्यादि में संशयात्मक भाव होता है (तो) (वह) मोह (आत्मविस्मृति) (है)। इस प्रकार उससे ढँका हुआ (जीव) राग (आसक्ति) अथवा द्वेष (शत्रुता) को प्राप्त करके व्याकुल होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

84. मोहेण व रागेण व दोसेण व परिणदस्स जीवस्स।
जायदि विविहो बंधो तम्हा ते संखवइदव्वा।।

मोहेण	(मोह) 3/1	मोह से
व	अव्यय	अथवा
रागेण	(राग) 3/1	राग से
व	अव्यय	अथवा
दोसेण	(दोस) 3/1	द्वेष से
व	अव्यय	पादपूरक
परिणदस्स	(परिणद) 6/1 वि	रूपान्तरित
जीवस्स	(जीव) 6/1	जीव के
जायदि	(जा→जाय) व 3/1 अक ('य' विकरण जोड़ा गया है)	उत्पन्न होता है
विविहो	(विविह) 1/1 वि	नाना प्रकार का
बंधो	(बंध) 1/1	बंधन
तम्हा	अव्यय	इसलिये
ते	(त) 1/2 सवि	वे
संखवइदव्वा	(संखवइदव्व) विधिकृ 1/2 अनि	समाप्त किये जाने चाहिये

अन्वय– मोहेण व रागेण व दोसेण व परिणदस्स जीवस्स विविहो बंधो जायदि तम्हा ते संखवइदव्वा।

अर्थ– मोह (आत्मविस्मृति) से अथवा राग (आसक्ति) से अथवा द्वेष (शत्रुता) से रूपान्तरित जीव के नाना प्रकार का (कर्म) बंधन उत्पन्न होता है, इसलिये वे (मोह, राग और द्वेष) समाप्त किये जाने चाहिये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

85. अट्ठे अजधागहणं करुणाभावो य मणुवतिरिएसु।
विसएसु य प्पसंगो मोहस्सेदाणि लिंगाणि।।

अट्ठे	(अट्ठ) 7/1	पदार्थ में
अजधागहणं	[(अजधा)-(गहण)]	
	अजधा (अ) = विपरीत	विपरीत
	गहणं (गहण) 1/1	ज्ञान
करुणाभावो	[(करुणा)-(अभाव) 1/1]	करुणा का अभाव
य	अव्यय	और
मणुवतिरिएसु[1]	[(मणुव)-(तिरिअ) 7/2]	मनुष्य और तिर्यंचों के प्रति
विसएसु	(विसय) 7/2	विषयों में
य	अव्यय	तथा
प्पसंगो	(प्पसंग) 1/1	आसक्ति
मोहस्सेदाणि	[(मोहस्स)+(एदाणि)]	
	मोहस्स (मोह) 6/1	मोह के
	एदाणि (एद) 1/2 सवि	ये सब
लिंगाणि	(लिंग) 1/2	चिह्न/लक्षण

अन्वय- अट्ठे अजधागहणं मणुवतिरिएसु य करुणाभावो य विसएसु प्पसंगो एदाणि मोहस्स लिंगाणि।

अर्थ- पदार्थ में विपरीत ज्ञान, मनुष्य और तिर्यंचों के प्रति करुणा का अभाव तथा विषयों (इन्द्रिय-विषयों) में आसक्ति- ये सब मोह (आत्मविस्मृति) *के चिह्न/लक्षण (हैं)।*

---

1. कभी-कभी द्वितीया विभक्ति के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम -प्राकृत-व्याकरणः 3-134)
के प्रति, की ओर के योग में द्वितीया विभक्ति का प्रयोग होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

86. जिणसत्थादो अट्ठे पच्चक्खादीहिं बुज्झदो णियमा।
खीयदि मोहोवचयो तम्हा सत्थं समधिदव्वं।।

जिणसत्थादो	[(जिण)-(सत्थ) 5/1]	जिन-आगम से
अट्ठे	(अट्ठ) 2/2	पदार्थों को
पच्चक्खादीहिं	[(पच्चक्ख)+(आदीहिं)]	
	[(पच्चक्ख) वि-(आदि) 3/2]	प्रत्यक्ष आदि के साथ
बुज्झदि[1]	(बुज्झ) व 3/1 सक	जानता है
णियमा	(णियम) 5/1	नियम से
खीयदि	(खीयदि) व कर्म 3/1 सक अनि	क्षय की जाती है
मोहोवचयो	[(मोह)+(उवचय)]	
	[(मोह)-(उवचय) 1/1]	मोहवृद्धि
तम्हा	अव्यय	इसलिये
सत्थं	(सत्थ) 1/1	आगम
समधिदव्वं	[(सं)+(अधिदव्वं)]	
	सं (अ) = खूब	खूब
	अधिदव्वं (अधिदव्व) विधिकृ 1/1 अनि	अध्ययन किया जाना चाहिये

अन्वय– जिणसत्थादो अट्ठे पच्चक्खादीहिं बुज्झदो णियमा मोहोवचयो खीयदि तम्हा सत्थं समधिदव्वं।

अर्थ– (जो) जिन-आगम से पदार्थों को प्रत्यक्ष आदि (प्रमाणों) के साथ जानता है (उसके द्वारा) नियम से मोहवृद्धि क्षय की जाती है, इसलिये आगम खूब अध्ययन किया जाना चाहिये।

1. यहाँ छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'बुज्झदो' के स्थान पर 'बुज्झदि' होना चाहिए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

87. दव्वाणि गुणा तेसिं पज्जाया अट्ठसण्णया भणिया।
तेसु गुणपज्जयाणं अप्पा दव्व त्ति उवदेसो।।

दव्वाणि	(दव्व) 1/2	द्रव्य
गुणा	(गुण) 1/2	गुण
तेसिं	(त) 6/2 सवि	उनकी
पज्जाया	(पज्जाय) 1/2	पर्यायें
अट्ठसण्णया	[(अट्ठ)-(सण्णया) 3/1 अनि]	पदार्थ नाम से
भणिया	(भण→भणिय) भूक 1/2	कही गई
तेसु	(त) 7/2 सवि	उनमें
गुणपज्जयाणं	[(गुण)-(पज्जाय→पज्जय)[1] 6/2]	गुण और पर्यायों का
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा
*दव्व त्ति	[(दव्व)+(इति)]	
(मूलशब्द)	दव्व (दव्व) 1/1	द्रव्य
	इति (अ) = इस प्रकार	इस प्रकार
उवदेसो	(उवदेस) 1/1	उपदेश

अन्वय- दव्वाणि गुणा तेसिं पज्जाया अट्ठसण्णया भणिया तेसु गुणपज्जयाणं अप्पा दव्व त्ति उवदेसो।

अर्थ- द्रव्य, गुण (और) उनकी पर्यायें पदार्थ नाम से कही गई (हैं)। उनमें गुण और पर्यायों का आत्मा (आधार) द्रव्य है, इस प्रकार उपदेश (है)।

---

1. यहाँ छन्द की मात्रा की पूर्ति हेतु 'पज्जाय' का 'पज्जय' किया गया है।

* प्राकृत में किसी भी कारक के लिए मूल संज्ञा शब्द काम में लाया जा सकता है। (पिशलः प्राकृत भाषाओंका व्याकरण, पृष्ठ 517)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

88. जो मोहरागदोसे णिहणदि उवलब्भ जोण्हमुवदेसं।
सो सव्वदुक्खमोक्खं पावदि अचिरेण कालेण।।

जो	(ज) 1/1 सवि	जो
मोहरागदोसे	[(मोह)-(राग)-(दोस) 2/2]	मोह, राग और द्वेष को
णिहणदि	(णिहण) व 3/1 सक	नष्ट करता है
उवलब्भ	(उवलब्भ) संकृ अनि	समझ करके
जोण्हमुवदेसं	[(जोण्हं)+(उवदेसं)]	
	जोण्हं (जोण्ह) 2/1 वि	दिव्य
	उवदेसं (उवदेस) 2/1	उपदेश को
सो	(त) 1/1 सवि	वह
सव्वदुक्खमोक्खं	[(सव्व)-(दुक्ख)-(मोक्ख) 2/1]	समस्त दुःखों से छुटकारा
पावदि	(पाव) व 3/1 सक	पा जाता है
अचिरेण	अव्यय	थोड़े
कालेण[1]	(काल) 3/1	समय में

अन्वय– जो जोण्हं उवदेसं उवलब्भ मोहरागदोसे णिहणदि सो अचिरेण कालेण सव्वदुक्खमोक्खं पावदि।

अर्थ– जो (आत्मा) दिव्य उपदेश को समझ करके मोह (आत्म-विस्मृति), राग (आसक्ति) और द्वेष (शत्रुता) को नष्ट करता है, वह थोड़े समय में (ही) समस्त दुःखों से छुटकारा पा जाता है।

---

1. कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर तृतीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरणः 3-137)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

89. णाणप्पगमप्पाणं परं च दव्वत्तणाहिसंबद्धं।
जाणदि जदि णिच्छयदो जो सो मोहक्खयं कुणदि।।

णाणप्पगमप्पाणं	[(णाणप्पगं)+(अप्पाणं)]	
	णाणप्पगं (णाणप्पग) 2/1 वि	ज्ञानस्वरूप
	अप्पाणं (अप्पाण) 2/1	स्व को
परं	(पर) 2/1 वि	पर को
च	अव्यय	और
दव्वत्तणाहिसंबद्धं	[(दव्वत्तण)+(अहिसंबद्धं)]	
	[(दव्वत्तण)-(अहिसंबद्ध) 2/1 वि]	द्रव्यता से जुड़ा हुआ
जाणदि	(जाण) व 3/1 सक	जानता है
जदि	अव्यय	यदि
णिच्छयदो	(णिच्छयद्रो) अव्यय पंचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय	निश्चयपूर्वक
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
सो	(त) 1/1 सवि	वह
मोहक्खयं	[(मोह)-(क्खय) 2/1]	मोह का विनाश
कुणदि	(कुण) व 3/1 सक	करता है

अन्वय–जदि जो णिच्छयदो परं च णाणप्पगमप्पाणं दव्वत्तणाहिसंबद्धं जाणदि सो मोहक्खयं कुणदि।

अर्थ– यदि जो (आत्मा) निश्चयपूर्वक पर को और ज्ञानस्वरूप स्व को द्रव्यता से जुड़ा हुआ जानता है (तो) वह मोह (आत्मविस्मृति) का विनाश करता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

90. तम्हा जिणमग्गादो गुणेहिं आदं परं च दव्वेसु।
अभिगच्छदु णिम्मोहं इच्छदि जदि अप्पणो अप्पा।।

तम्हा	अव्यय	इसलिये
जिणमग्गादो	[(जिण)-(मग्ग) 5/1]	जिन-मार्ग से
गुणेहिं[1]	(गुण) 3/2	गुणों के साथ
आदं	(आद) 2/1	आत्मा को
परं	(पर) 2/1 वि	पर को
च	अव्यय	और
दव्वेसु	(दव्व) 7/2	द्रव्यों में
अभिगच्छदु	(अभिगच्छ) विधि 3/1 सक	समझना चाहिये
णिम्मोहं	(णिम्मोह) 2/1 वि	आसक्ति-रहितता
इच्छदि	(इच्छ) व 3/1 सक	चाहता है
जदि	अव्यय	यदि
अप्पणो	(अप्प) 6/1	स्वयं की
अप्पा	(अप्प) 1/1	आत्मा

अन्वय– तम्हा जदि अप्पा अप्पणो णिम्मोहं इच्छदि जिणमग्गादो दव्वेसु गुणेहिं आदं च परं अभिगच्छदु।

अर्थ– इसलिये यदि आत्मा स्वयं की आसक्ति-रहितता चाहता है (तो) जिन-मार्ग (जिनेन्द्र देव द्वारा प्रतिपादित आगम-पथ) से द्रव्यों में गुणों के साथ आत्मा (स्वयं) को और पर (अन्य) को समझना चाहिये।

---

1. 'सह, सद्धिं, समं' (साथ) अर्थ वाले शब्दों के योग में तृतीया विभक्ति होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

91. सत्तासंबद्धेदे सविसेसे जो हि णेव सामण्णे।
सद्दहदि ण सो समणो तत्तो धम्मो ण संभवदि।।

सत्तासंबद्धेदे	[(सत्तासंबद्ध)+(एदे)] [(सत्ता)-(संबद्ध)-(एद)[1] 2/2] सवि	सत्ता से युक्त इन पर
सविसेसे	(स-विसेस) 2/2 वि	विशेष सत्ताओं से युक्त को
जो	(ज) 1/1 सवि	जो
हि	अव्यय	निश्चय ही
णेव	अव्यय	नहीं
सामण्णे	(सामण्ण) 7/1	श्रमण अवस्था में
सद्दहदि	(सद्दह) व 3/1 सक	श्रद्धा करता है
ण	अव्यय	नहीं
सो	(त) 1/1 सवि	वह
समणो	(समण) 1/1	श्रमण
तत्तो	(त) 5/1 सवि	उससे
धम्मो	(धम्म) 1/1	धर्म
ण	अव्यय	नहीं
संभवदि	(संभव) व 3/1 अक	घटित होता है

अन्वय– जो सामण्णे सत्तासंबद्धेदे सविसेसे णेव सद्दहदि सो हि समणो ण तत्तो धम्मो ण संभवदि।

अर्थ– जो श्रमण अवस्था में (सामान्य) सत्ता से युक्त (और) विशेष सत्ताओं से युक्त इन (द्रव्यों) पर श्रद्धा नहीं करता है, वह निश्चय ही श्रमण नहीं है, उससे धर्म घटित नहीं होता है।

---

1. 'श्रद्धा' के योग में द्वितीया विभक्ति का प्रयोग होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

92. **जो णिहदमोहदिट्ठी आगमकुसलो विरागचरियम्हि।**
अब्भुट्ठिदो महप्पा धम्मो त्ति विसेसिदो समणो।।

जो	(ज) 1/1 सवि	जो
णिहदमोहदिट्ठी	[(णिहद) भूक अनि	नष्ट की गई
	-(मोह)-(दिट्ठि) 1/1]	मोह-दृष्टि
आगमकुसलो	[(आगम)-(कुसल) 1/1 वि]	आगम में कुशल
विरागचरियम्हि	[(विराग)-(चरिय) 7/1]	वीतराग चारित्र में
अब्भुट्ठिदो	(अब्भुट्ठिद) भूक 1/1 अनि	उद्यत
महप्पा	(महप्प) 1/1	महात्मा
धम्मो त्ति	[(धम्मो)+(इति)]	
	धम्मो (धम्म) 1/1	धर्म
	इति (अ) = और	और
विसेसिदो	(विसेसिद) भूक 1/1 अनि	विशेषणों से युक्त
समणो	(समण) 1/1	श्रमण

अन्वय– णिहदमोहदिट्ठी जो आगमकुसलो विरागचरियम्हि अब्भुट्ठिदो महप्पा समणो धम्मो त्ति विसेसिदो।

अर्थ– (जिसके द्वारा) मोह-दृष्टि नष्ट की गई (है), जो आगम में कुशल (है) और (जो) वीतराग चारित्र में उद्यत (है), (वह) महात्मा (है), श्रमण (है) और वह (ही) इन विशेषणों से युक्त (चलता-फिरता) 'धर्म' (है)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मूल पाठ

1. एस सुरासुरमणुसिंदवंदिदं धोदघाइकम्ममलं।
पणमामि वड्ढमाणं तित्थं धम्मस्स कत्तारं।।

2. सेसे पुण तित्थयरे ससव्वसिद्धे विसुद्धसब्भावे।
समणे य णाणदंसणचरित्ततववीरियायारे।।

3. ते ते सव्वे समगं समगं पत्तेगमेव पत्तेगं।
वंदामि य वट्टंते अरहंते माणुसे खेत्ते।।

4. किच्चा अरहंताणं सिद्धाणं तह णमो गणहराणं।
अज्झावयवग्गाणं साहूणं चेव सव्वेसिं।।

5. तेसिं विसुद्धदंसणणाणपहाणासमं समासेज्ज।
उवसंपयामि सम्मं जत्तो णिव्वाणसंपत्ती।।

6. संपज्जदि णिव्वाणं देवासुरमणुयरायविहवेहिं।
जीवस्स चरित्तादो दंसणणाणप्पहाणादो।।

7. चारित्तं खलु धम्मो धम्मो जो सो समो त्ति णिद्दिट्ठो।
मोहक्खोहविहीणो परिणामो अप्पणो हु समो।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

8. परिणमदि जेण दव्वं तक्कालं तम्मय त्ति पण्णत्तं।
तम्हा धम्मपरिणदो आदा धम्मो मुणेदव्वो।।

9. जीवो परिणमदि जदा सुहेण असुहेण वा सुहो असुहो।
सुद्धेण तदा सुद्धो हवदि हि परिणामसब्भावो।।

10. णत्थि विणा परिणामं अत्थो अत्थं विणेह परिणामो।
दव्वगुणपज्जयत्थो अत्थो अत्थित्तणिव्वत्तो।।

11. धम्मेण परिणदप्पा अप्पा जदि सुद्धसंपयोगजुदो।
पावदि णिव्वाणसुहं सुहोवजुत्तो व सग्गसुहं।।

12. असुहोदयेण आदा कुणरो तिरियो भवीय णेरइयो।
दुक्खसहस्सेहिं सदा अभिंधुदो भमदि अच्चंतं।।

13. अइसयमादसमुत्थं विसयातीदं अणोवममणंतं।
अव्वुच्छिण्णं च सुहं सुद्धुवओगप्पसिद्धाणं।।

14. सुविदिदपयत्थसुत्तो संजमतवसंजुदो विगदरागो।
समणो समसुहदुक्खो भणिदो सुद्धोवओगो त्ति।।

15. उवओगविसुद्धो जो विगदावरणंतरायमोहरओ।
भूदो सयमेवादा जादि परं णेयभूदाणं।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

16. तह सो लद्धसहावो सव्वण्हू सव्वलोगपदिमहिदो।
भूदो सयमेवादा हवदि सयंभु त्ति णिद्दिट्ठो।।

17. भंगविहीणो य भवो संभवपरिवज्जिदो विणासो हि।
विज्जदि तस्सेव पुणो ठिदिसंभवणाससमवायो।।

18. उप्पादो य विणासो विज्जदि सव्वस्स अट्ठजादस्स।
पज्जाएण दु केणवि अट्ठो खलु होदि सब्भूदो।।

19. पक्खीणघादिकम्मो अणंतवरवीरिओ अधिकतेजो।
जादो अणिंदिओ सो णाणं सोक्खं च परिणमदि।।

20. सोक्खं वा पुण दुक्खं केवलणाणिस्स णत्थि देहगदं।
जम्हा अदिंदियत्तं जादं तम्हा दु तं णेयं।।

21. परिणमदो खलु णाणं पच्चक्खा सव्वदव्वपज्जाया।
सो णेव ते विजाणदि उग्गहपुव्वाहिं किरियाहिं।।

22. णत्थि परोक्खं किंचिवि समंत सव्वक्खगुणसमिद्धस्स।
अक्खातीदस्स सदा सयमेव हि णाणजादस्स।।

23. आदा णाणपमाणं णाणं णेयप्पमाणमुद्दिट्ठं।
णेयं लोयालोयं तम्हा णाणं तु सव्वगयं।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

24. णाणप्पमाणमादा ण हवदि जस्सेह तस्स सो आदा।
हीणो वा अहिओ वा णाणादो हवदि धुवमेव।।

25. हीणो जदि सो आदा तण्णाणमचेदणं ण जाणादि।
अहिओ वा णाणादो णाणेण विणा कहं णादि।।

26. सव्वगदो जिणवसहो सव्वे वि य तग्गया जगदि अट्ठा।
णाणमयादो य जिणो विसयादो तस्स ते भणिया।।

27. णाणं अप्प त्ति मदं वट्टदि णाणं विणा ण अप्पाणं।
तम्हा णाणं अप्पा अप्पा णाणं व अण्णं वा।।

28. णाणी णाणसहावो अट्ठा णेयप्पगा हि णाणिस्स।
रूवाणि व चक्खूणं णेवण्णोण्णेसु वट्टंति।।

29. ण पविट्ठो णाविट्ठो णाणी णेयेसु रूवमिव चक्खू।
जाणदि पस्सदि णियदं अक्खातीदो जगमसेसं।।

30. रयणमिह इन्दणीलं दुद्धज्झसियं जहा सभासाए।
अभिभूय तं पि दुद्धं वट्टदि तह णाणमत्थेसु।।

31. जदि ते ण संति अट्ठा णाणे णाणं ण होदि सव्वगयं।
सव्वगयं वा णाणं कहं ण णाणट्ठिया अट्ठा।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

32. गेण्हदि णेव ण मुंचदि ण परं परिणमदि केवली भगवं।
पेच्छदि समंतदो सो जाणदि सव्वं णिरवसेसं।।

33. जो हि सुदेण विजाणदि अप्पाणं जाणगं सहावेण।
तं सुयकेवलिमिसिणो भणंति लोयप्पदीवयरा।।

34. सुत्तं जिणोवदिट्ठं पोग्गलदव्वप्पगेहिं वयणेहिं।
तं जाणणा हि णाणं सुत्तस्स य जाणणा भणिया।।

35. जो जाणदि सो णाणं ण हवदि णाणेण जाणगो आदा।
णाणं परिणमदि सयं अट्ठा णाणट्ठिया सव्वे।।

36. तम्हा णाणं जीवो णेयं दव्वं तिहा समक्खादं।
दव्वं ति पुणो आदा परं च परिणामसंबद्धं।।

37. तक्कालिगेव सव्वे सदसब्भूदा हि पज्जाया तासिं।
वट्टंते ते णाणे विसेसदो दव्वजादीणं।।

38. जे णेव हि संजाया जे खलु णट्ठा भवीय पज्जाया।
ते होंति असब्भूदा पज्जाया णाणपच्चक्खा।।

39. जदि पच्चक्खमजायं पज्जायं पलइयं च णाणस्स।
ण हवदि वा तं णाणं दिव्वं ति हि के परूवेंति।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

40. अत्थं अक्खणिवदिदं ईहापुव्वेहिं जे विजाणंति।
तेसिं परोक्खभूदं णादुमसक्कं ति पण्णत्तं।।

41. अपदेसं सपदेसं मुत्तममुत्तं च पज्जयमजादं।
पलयं गयं च जाणदि तं णाणमदिंदियं भणियं।।

42. परिणमदि णेयमट्ठं णादा जदि णेव खाइगं तस्स।
णाणं ति तं जिणिंदा खवयंतं कम्ममेवुत्ता।।

43. उदयगदा कम्मंसा जिणवरवसहेहिं णियदिणा भणिया।
तेसु विमूढो रत्तो दुट्ठो वा बंधमणुभवदि।।

44. ठाणणिसेज्जविहारा धम्मुवदेसो य णियदयो तेसिं।
अरहंताणं काले मायाचारो व्व इत्थीणं।।

45. पुण्णफला अरहंता तेसिं किरिया पुणो हि ओदइया।
मोहादीहिं विरहिया तम्हा सा खाइग त्ति मदा।।

46. जदि सो सुहो व असुहो ण हवदि आदा सयं सहावेण।
संसारो वि ण विज्जदि सव्वेसिं जीवकायाणं।।

47. जं तक्कालियमिदरं जाणदि जुगवं समंतदो सव्वं।
अत्थं विचित्तविसमं तं णाणं खाइयं भणियं।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

48. जो ण विजाणदि जुगवं अत्थे तिक्कालिगे तिहुवणत्थे।
णादुं तस्स ण सक्कं सपज्जयं दव्वमेगं वा।।

49. दव्वं अणंतपज्जयमेगमणंताणि दव्वजादाणि।
ण विजाणदि जदि जुगवं किध सो सव्वाणि जाणादि।।

50. उप्पज्जदि जदि णाणं कमसो अट्ठे पडुच्च णाणिस्स।
तं णेव हवदि णिच्चं ण खाइगं णेव सव्वगदं।।

51. तिक्कालणिच्चविसमं सयलं सव्वत्थ संभवं चित्तं।
जुगवं जाणदि जोण्हं अहो हि णाणस्स माहप्पं।।

52. ण वि परिणमदि ण गेण्हदि उप्पज्जदि णेव तेसु अट्ठेसु।
जाणण्णवि ते आदा अबंधगो तेण पण्णत्तो।।

53. अत्थि अमुत्तं मुत्तं अदिंदियं इंदियं च अत्थेसु।
णाणं च तहा सोक्खं जं तेसु परं च तं णेयं।।

54. जं पेच्छदो अमुत्तं मुत्तेसु अदिंदिय च पच्छण्णं।
सयलं सगं च इदरं तं णाणं हवदि पच्चक्खं।।

55. जीवो सयं अमुत्तो मुत्तिगदो तेण मुत्तिणा मुत्तं।
ओगेण्हित्ता जोग्गं जाणदि वा तण्ण जाणादि।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

56. फासो रसो य गंधो वण्णो सद्दो य पुग्गला होंति।
अक्खाणं ते अक्खा जुगवं ते णेव गेण्हंति।।

57. परदव्वं ते अक्खा णेव सहावो त्ति अप्पणो भणिदा।
उवलद्धं तेहि कधं पच्चक्खं अप्पणो होदि।।

58. जं परदो विण्णाणं तं तु परोक्खं ति भणिदमट्ठेसु।
जदि केवलेण णादं हवदि हि जीवेण पच्चक्खं।।

59. जादं सयं समत्तं णाणमणंतत्थवित्थडं विमलं।
रहियं तु ओग्गहादिहिं सुहं ति एगंतियं भणियं।।

60. जं केवलं ति णाणं तं सोक्खं परिणमं च से[1] चेव।
खेदो तस्स ण भणिदो जम्हा घादी खयं जादा।।

61. णाणं अत्थंतगयं लोयालोएसु वित्थडा दिट्ठी।
णट्ठमणिट्ठं सव्वं इट्ठं पुण जं हि तं लद्धं।।

62. णो सद्दहंति सोक्खं सुहेसु परमं ति विगदघादीणं।
सुणिदूण ते अभव्वा भव्वा वा तं पडिच्छंति।।

63. मणुयासुरामरिंदा अहिदुदा इन्दियेहिं सहजेहिं।
असहंता तं दुक्खं रमंति विसएसु रम्मेसु।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

64. जेसिं विसयेसु रदी तेसिं दुक्खं वियाण सब्भावं।
जइ तं ण हि सब्भावं वावारो णत्थि विसयत्थं।।

65. पप्पा इट्ठे विसये फासेहिं समस्सिदे सहावेण।
परिणममाणो अप्पा सयमेव सुहं ण हवदि देहो।।

66. एगंतेण हि देहो सुहं ण देहिस्स कुणदि सग्गे वा।
विसयवसेण दु सोक्खं दुक्खं वा हवदि सयमादा।।

67. तिमिरहरा जइ दिट्ठी जणस्य दीवेण णत्थि कायव्वं।
तह सोक्खं सयमादा विसया किं तत्थ कुव्वंति।।

68. सयमेव जहादिच्चो तेजो उण्हो य देवदा णभसि।
सिद्धो वि तहा णाणं सुहं च लोगे तहा देवो।।

69. देवदजदिगुरुपूजासु चेव दाणम्मि वा सुसीलेसु।
उववासादिसु रत्तो सुहोवओगप्पगो अप्पा।।

70. जुत्तो सुहेण आदा तिरियो वा माणुसो व देवो वा।
भूदो तावदि कालं लहदि सुहं इन्दियं विविहं।।

71. सोक्खं सहावसिद्धं णत्थि सुराणं पि सिद्धमुवदेसे।
ते देहवेदणट्टा रमंति विसएसु रम्मेसु।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

72. णरणारयतिरियसुरा भजंति जदि देहसंभवं दुक्खं।
किह सो सुहो व असुहो उवओगो हवदि जीवाणं।।

73. कुलिसाउहचक्कधरा सुहोवओगप्पगेहिं भोगेहिं।
देहादीणं विद्धिं करेंति सुहिदा इवाभिरदा।।

74. जदि संति हि पुण्णाणि य परिणामसमुब्भवाणि विविहाणि।
जणयंति विसयतण्हं जीवाणं देवदंताणं।।

75. ते पुण उदिण्णतण्हा दुहिदा तण्हाहिं विसयसोक्खाणि।
इच्छंति अणुभवंति य आमरणं दुक्खसंतत्ता।।

76. सपरं बाधासहियं विच्छिण्णं बंधकारणं विसमं।
जं इन्दियेहिं लद्धं तं सोक्खं दुक्खमेव तहा।।

77. ण हि मण्णदि जो एवं णत्थि विसेसो त्ति पुण्णपावाणं।
हिंडदि घोरमपारं संसारं मोहसंछण्णो।।

78. एवं विदिदत्थो जो दव्वेसु ण रागमेदि दोसं वा।
उवओगविसुद्धो सो खवेदि देहुब्भवं दुक्खं।।

79. चत्ता पावारंभं समुट्ठिदो वा सुहम्मि चरियम्हि।
ण जहदि जदि मोहादी ण लहदि सो अप्पगं सुद्धं।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

80. जो जाणदि अरहंतं दव्वत्तगुणत्तपज्जयत्तेहिं।
सो जाणदि अप्पाणं मोहो खलु जादि तस्स लयं।।

81. जीवो ववगदमोहो उवलद्धो तच्चमप्पणो सम्मं।
जहदि जदि रागदोसे सो अप्पाणं लहदि सुद्धं।।

82. सव्वे वि य अरहंता तेण विधाणेण खविदकम्मंसा।
किच्चा तधोवदेसं णिव्वादा ते णमो तेसिं।।

83. दव्वादिएसु मूढो भावो जीवस्स हवदि मोहो त्ति।
खुब्भदि तेणुच्छण्णो पप्पा रागं व दोसं वा।।

84. मोहेण व रागेण व दोसेण व परिणदस्स जीवस्स।
जायदि विविहो बंधो तम्हा ते संखवइदव्वा।।

85. अट्ठे अजधागहणं करुणाभावो य मणुवतिरिएसु।
विसएसु य प्पसंगो मोहस्सेदाणि लिंगाणि।।

86. जिणसत्थादो अट्ठे पच्चक्खादीहिं बुज्झदो णियमा।
खीयदि मोहोवचयो तम्हा सत्थं समधिदव्वं।।

87. दव्वाणि गुणा तेसिं पज्जाया अट्ठसण्णया भणिया।
तेसु गुणपज्जयाणं अप्पा दव्व त्ति उवदेसो।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

88. जो मोहरागदोसे णिहणदि उवलब्भ जोण्हमुवदेसं।
सो सव्वदुक्खमोक्खं पावदि अचिरेण कालेण।।

89. णाणप्पगमप्पाणं परं च दव्वत्तणाहिसंबद्धं।
जाणदि जदि णिच्छयदो जो सो मोहक्खयं कुणदि।।

90. तम्हा जिणमग्गादो गुणेहिं आदं परं च दव्वेसु।
अभिगच्छदु णिम्मोहं इच्छदि जदि अप्पणो अप्पा।।

91. सत्तासंबद्धेदे सविसेसे जो हि णेव सामण्णे।
सद्दहदि ण सो समणो तत्तो धम्मो ण संभवदि।।

92. जो णिहदमोहदिट्ठी आगमकुसलो विरागचरियम्हि।
अब्भुट्ठिदो महप्पा धम्मो त्ति विसेसिदो समणो।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट-1

संज्ञा-कोश

संज्ञा शब्द	अर्थ	लिंग	गा.सं.
अंत	अंत, हद तक	अकारान्त पु.	61, 74
अंतराय	अन्तराय	अकारान्त पुं., नपुं	15
अंस	खंड	अकारान्त पु.	43, 82
अक्ख	इन्द्रिय	अकारान्त नपुं.	29, 40, 56, 57
अज्झावय	अध्यापक	अकारान्त पु.	4
अट्ठ	पदार्थ	अकारान्त पुं., नपुं.	18, 26, 28, 31, 35, 42, 50, 52, 58, 85, 86, 87
अत्थ	पदार्थ	अकारान्त पु., नपुं.	10, 30, 40, 47, 48, 53, 59, 61,
	परमार्थ		78
अत्थित्त	अस्तित्व/सत्त्व	अकारान्त नपुं.	10
अदिंदियत्त	अतीन्द्रियता	अकारान्त नपुं.	20
अप्प	आत्मा	अकारान्त पु.	7, 11, 27, 57, 65, 69, 81, 87, 90,
अप्प	स्वयं	अकारान्त पु.	90
अप्पग	स्वरूप/स्वभाव	अकारान्त पु.	28
	आत्मा	अकारान्त पु.	79
अप्पाण	आत्मा	अकारान्त पु.	27, 33, 80, 81

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	स्व	अकारान्त पु.	89
अभाव	अभाव	अकारान्त पु.	85
अमरिंद	देवों का राजा	अकारान्त पु.	63
अरहंत	अरिहंत	अकारान्त पु.	3, 4, 44, 45, 80, 82
अलोय/	अलोक	अकारान्त पु.	23
अलोअ			61
असुर	दानव	अकारान्त पु.	1, 6
	असुर		63
आगम	आगम	अकारान्त पु.	92
आद	आत्मा	अकारान्त पु.	8, 12, 13, 15, 16, 23, 24, 25, 35, 36, 46, 52, 66, 67, 70, 90
आदि	आदि	इकारान्त पु.	45, 59, 69, 79, 83, 86
आदि	अन्य	इकारान्त पु.	73
आदिच्च	सूर्य	अकारान्त पु.	67
आमरण	मरण तक	अकारान्त पु., नपुं.	75
आयार	आचार	अकारान्त पु.	2
आरंभ	पापकर्म	अकारान्त पु.	79
आवरण	आवरण	अकारान्त नपुं.	15
आसम	अवस्था	अकारान्त पु.	5

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इन्दणील	इन्द्रणील	अकारान्त पु., नपुं.	30
इंदिय	इन्द्रिय	अकारान्त पु., नपुं.	53, 63, 70, 76
इसि	देव	इकारान्त पु.	33
इत्थी	स्त्री	इकारान्त स्त्री.	44
ईहा	ईहा	आकारान्त स्त्री.	40
उग्गह	अवग्रह	अकारान्त पु.	21
उण्ह	ताप	अकारान्त पु.	68
उदय	कर्मपरिणाम	अकारान्त पु.	12
	उदय	अकारान्त पु.	43
उप्पाद	उत्पाद	अकारान्त पुं.	18
उवओग	उपयोग	अकारान्त पु.	13, 14, 15, 72, 78
उवचय	वृद्धि	अकारान्त पु.	86
उवदेस	उपदेश	अकारान्त पु.	44, 71, 82, 87, 88
उववास	उपवास	अकारान्त पु., नपुं.	69
ओग्गह	अवग्रह	अकारान्त पु.	59
ओदइय	औदयिक	अकारान्त पु., नपुं	45
कम्म	कर्म	अकारान्त पु., नपुं.	42, 43, 82
करुणा	करुणा	आकारान्त स्त्री.	85
कारण	कारण	अकारान्त नपुं.	76
काल	अवस्था	अकारान्त पु.	44
	समय		70, 88
किरिया	क्रिया	आकारान्त स्त्री.	21, 45

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुणर	खोटा मनुष्य	अकारान्त पु.	12
खय	विनाश	अकारान्त पु.	60, 89
खाइग	क्षायिक	अकारान्त पु.	42, 50
खाइय	क्षायिक	अकारान्त पु.	47
खेत्त	क्षेत्र	अकारान्त पु., नपुं.	3
खेद	दुःख	अकारान्त पु.	60
खोह	व्याकुलता	अकारान्त पु.	7
गंध	गंध	अकारान्त पु.	56
गणहर	गणधर	अकारान्त पु.	4
गहण	ज्ञान	अकारान्त नपुं.	85
गुण	गुण	अकारान्त पु., नपुं.	10, 22, 87, 90
गुणत्त	गुणत्व	अकारान्त नपुं.	80
गुरु	गुरु	*उकारान्त* पु.	69
घाइकम्म	घातिया कर्म	अकारान्त नपुं.	1, 19
चक्खु	चक्षु	*उकारान्त* पु., नपुं.	28, 29
चरिय	चारित्र	अकारान्त नपुं.	79, 92
चरित्त	चारित्र	अकारान्त नपुं.	2, 6
चारित्त	चारित्र	अकारान्त नपुं.	7
जग	संसार	अकारान्त नपुं.	29
जण	प्राणी	अकारान्त पु.	67
जदि	मुनि	**इकारान्त** पु.	69
जाणणा	बोध	आकारान्त स्त्री.	34
जाद	समूह	अकारान्त नपुं.	18, 49

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जादि	वर्ग	**इकारान्त** स्त्री.	37
जिण	केवली	अकारान्त पु.	26
	जिनेन्द्र	अकारान्त पु.	34
	जिन	अकारान्त पु.	86, 90
जिणवर	जिनवर	अकारान्त पु.	43
जिणवसह	अरिहंत	अकारान्त पु.	26
जिणिंद	जिनेन्द्र	अकारान्त पु.	42
जीव	जीव	अकारान्त पु., नपुं.	6, 9, 36, 55, 72, 74, 81, 83, 84,
	आत्मा	अकारान्त पु., नपुं.	58
जीवकाय	जीवसमूह	अकारान्त पु.	46
ठाण	खड़े रहना	अकारान्त पु., नपुं	44
ठिदि	स्थिति	**इकारान्त** स्त्री.	17
णर	मनुष्य	अकारान्त पु.	72
णाण	ज्ञान	अकारान्त नपुं.	2, 5, 6, 19, 21, 22, 23, 24, 25, 27, 28, 30, 31, 34, 35, 36, 37, 38, 39, 41, 42, 47, 50, 51, 53, 54, 59, 60, 61, 68

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णास	विनाश	अकारान्त पुं.	17
णिच्छय	निश्चय	अकारान्त पु.	89
णियम	नियम	अकारान्त पु.	86
णिव्वाण	निर्वाण	अकारान्त नपुं.	5, 6, 11
णिसेज्जा	बैठना	आकारान्त स्त्री.	44
तच्च	सार	अकारान्त नपुं.	81
तण्हा	तृष्णा	आकारान्त स्त्री.	74, 75
तव	तप	अकारान्त पु., नपुं.	2, 14
तिक्काल	तीन काल	अकारान्त पु.	51
तित्थयर	तीर्थंकर	अकारान्त पु.	2
तिरिय	तिर्यंच	अकारान्त पु., नपुं.	70, 72, 85
	पशु, पक्षी आदि प्राणी	अकारान्त पु.	12
तेज	कान्ति	अकारान्त पुं.	19
	प्रकाश		68
दंसण	दर्शन	अकारान्त पु., नपुं.	2, 5, 6
दव्व	द्रव्य	अकारान्त पु., नपुं	8, 10, 21, 34, 36, 37, 48, 49, 57, 78, 83, 87, 90
दव्वत्त	द्रव्यत्व	अकारान्त नपुं	80
दव्वत्तण	द्रव्यता	अकारान्त पु., नपुं	89
दाण	दान	अकारान्त पु., नपुं.	69
दिट्ठि	दर्शन	इकारान्त स्त्री.	61
	देखने की शक्ति		67

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	दृष्टि		92
दीव	दीपक	अकारान्त पु.	67
दुक्ख	दुःख	अकारान्त पुं., नपुं	12, 14, 20, 63, 64, 66, 72, 75, 76, 78, 88
दुद्ध	दूध	अकारान्त नपुं.	30
देव	देवता	अकारान्त पु., नपुं.	6
	देव		68, 70
देवद	देवता	अकारान्त नपुं.	69
देवदा	देवता	आकारान्त स्त्री.	68, 74
देह	देह	अकारान्त पु., नपुं.	17, 65, 72, 78
	शरीर		66, 71, 73
दोस	द्वेष	अकारान्त पु.	78, 81, 83, 84, 88
धम्म	धर्म	अकारान्त पु., नपुं.	1, 7, 8, 44, 91, 92
	स्वभाव	अकारान्त पु., नपुं.	11
पच्चक्ख	प्रत्यक्ष	अकारान्त नपुं.	39, 54, 57, 58
पज्जाय	पर्याय	अकारान्त पु.	18, 21, 37, 38, 39, 41, 48, 49, 87
पज्जयत्त	पर्यायत्व	अकारान्त नपुं.	80
पदि	अधिपति	इकारान्त पुं.	16

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पमाण	प्रमाण	अकारान्त नपुं.	23, 24
पयत्थ	पदार्थ	अकारान्त पु.	14
परिणम	प्रभाव	अकारान्त नपुं.	60
परिणाम	परिणाम	अकारान्त पु.	7, 9, 10, 74
	परिवर्तन	अकारान्त पु.	9, 10
	परिणमन		36
परोक्ख	परोक्ष	अकारान्त नपुं.	22, 58
	अनुपस्थित		40
पलय	विनाश	अकारान्त पु.	41
पसंग	आसक्ति	अकारान्त पु., नपुं	85
पाव	पाप	अकारान्त पु., नपुं	77, 79
पुग्गल	पुद्गल	अकारान्त पु., नपुं.	56
पुण्ण	पुण्य	अकारान्त पु., नपुं	45, 74, 77
पूजा	भक्ति	आकारान्त स्त्री.	69
पोग्गल	पुद्गल	अकारान्त पु., नपुं.	34
फल	प्रभाव	अकारान्त पु., नपुं	45
फास	स्पर्श	अकारान्त पु., नपुं.	56
	स्पर्शन इन्द्रिय		65
बंध	कर्मबंध	अकारान्त पु.	43
	बंध		76
	बंधन		84
बाधा	अड़चन	आकारान्त स्त्री.	76
भंग	विनाश	अकारान्त पु.	17

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवंत	भगवान	अकारान्त पु.	32
भव	उत्पत्ति	अकारान्त पु.	17
भाव	भाव	अकारान्त पु.	83
भूद	पदार्थ	अकारान्त पु.	15
भोग	धन-सम्पत्ति	अकारान्त पु., नपुं	73
मग्ग	मार्ग	अकारान्त पु.	90
मणुय	मनुष्य	अकारान्त पु.	63
मणुयराय	मनुष्यों का स्वामी	अकारान्त पु.	6
मणुव	मनुष्य	अकारान्त पु.	85
मणुसिंद	राजा	अकारान्त पु.	1
मल	मैल	अकारान्त पु.,नपुं.	1
महप्प	महात्मा	अकारान्त पु.	92
माणुस	मनुष्य	अकारान्त पु., नपुं.	3, 70
मायाचार	मातृत्व	अकारान्त पु.	44
माहप्प	महिमा	अकारान्त पु., नपुं.	51
मुत्ति	देह	इकारान्त स्त्री.	55
मोक्ख	छुटकारा	अकारान्त पु.	88
मोह	आत्मविस्मृति	अकारान्त पु.	7, 77
	मोह		15, 45, 79, 80, 81, 83, 84, 85, 86, 88, 89, 92
रअ	रज	अकारान्त पु., नपुं.	15
रदि	रति	इकारान्त स्त्री.	64

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रयण	रत्न	अकारान्त पु., नपुं.	30
रस	रस	अकारान्त पु., नपुं.	56
राग	आसक्ति	अकारान्त पु.	14
	राग	अकारान्त पु.	78, 81, 83, 84, 88
रूव	रूप	अकारान्त पु., नपुं.	28, 29
लय	समाप्ति	अकारान्त पु.	80
लिंग	चिह्न/लक्षण	अकारान्त नपुं	85
लोग	लोक	अकारान्त पु.	16, 68
लोय	लोक	अकारान्त पु.	23, 33, 61
वग्ग	वर्ग	अकारान्त पु.	4
वड्ढमान	वर्धमान	अकारान्त पु.	1
वण्ण	वर्ण	अकारान्त पु.	56
वयण	वचन	अकारान्त पु., नपुं.	34
वसह	अरिहंत	अकारान्त पु.	43
वावार	प्रयत्न	अकारान्त पु.	64
विणास	विनाश	अकारान्त पु.	17, 18
विण्णाण	ज्ञान	अकारान्त नपुं.	58
विद्धि	बढ़ोतरी	इकारान्त स्त्री.	73
विधाण	रीति	अकारान्त नपुं.	82
विराग	वीतराग	अकारान्त पु.	92
विसअ	विषय	अकारान्त पु.	71
विसय	विषय	अकारान्त पु.	26, 63, 64, 65, 67, 71, 85, 74,75
	इन्द्रिय-विषय	अकारान्त पु.	13

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विसेस	भेद	अकारान्त पु., नपुं	77
विहव	वैभव	अकारान्त पु.	6
विहार	गमन	अकारान्त पु.	44
वीरिय/	वीर्य	अकारान्त पु.	2
वीरिअ	सामर्थ्य		19
वेदणा	संताप	आकारान्त स्त्री.	71
संजम	संयम	अकारान्त पु.	14
संपत्ति	प्राप्ति	इकारान्त स्त्री.	5
संपयोग	संयोग	अकारान्त पु.	11
संभव	उत्पत्ति	अकारान्त पु.	17
	संभव	अकारान्त पु.	51
संसार	संसार	अकारान्त पु.	46, 77
सग्ग	स्वर्ग	अकारान्त पु., नपुं.	11, 66
सत्ता	सत्ता	आकारान्त स्त्री.	91
सत्थ	आगम	अकारान्त पु., नपुं	86
सद्द	शब्द	अकारान्त पु., नपुं.	56
सब्भाव	स्वभाव	अकारान्त पु.	2, 9
	प्राकृतिक		64
भासा	दीप्ति	आकारान्त स्त्री.	30
सम	समत्व	अकारान्त पु.	7
समण	श्रमण	अकारान्त पु.	2, 14, 91, 92
समवाय	अविच्छिन्न संयोग	अकारान्त पु.	17
सम्म	समत्व	अकारान्त नपुं.	5

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सयंभू	स्वयंभू	*ऊकारान्त* पु.	16
सहस्स	हजार	अकारान्त पु., नपुं	12
सहाव	स्वभाव	अकारान्त पु..	16, 28, 33, 46, 65, 71
	स्वरूप		57
साहु	साधु	*उकारान्त* पु.	4
सामण्ण	श्रमण अवस्था	अकारान्त नपुं.	91
सिद्ध	मुक्त पुरुष	अकारान्त नपुं.	68
सुत्त	आगम	अकारान्त नपुं.	14
	सूत्र		34
सुद	श्रुतज्ञान	अकारान्त नपुं.	33
सुर	देवता	अकारान्त पु.	1, 71
	देव		72
सुसील	श्रेष्ठ आचरण	अकारान्त नपुं.	69
सुह	सुख	अकारान्त नपुं.	11, 13, 14, 59, 62,65, 66, 68, 70
सोक्ख	सुख	अकारान्त नपुं.	19, 20, 53,60,62, 66, 67,71, 75, 76

अनियमित संज्ञा

जगदि	जगत में	अकारान्त नपुं. अनि 26
णभसि	आकाश में	अकारान्त नपुं. अनि 68
तण्णाण	वह ज्ञान	अकारान्त नपुं. अनि 25
सण्णया	नाम से	आकारान्त स्त्री.अनि 87

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रिया-कोश

अकर्मक

क्रिया	अर्थ	गा.सं.
अस	होना	53, 64
उप्पज्ज	उत्पन्न होना	50, 52
खुब्भ	व्याकुल होना	83
जाय	उत्पन्न होना	84
परिणम	रूपान्तरण को प्राप्त होना	8, 9,
	रूपान्तरित होना	35
रम	रमण करना	63, 71
वट्ट	विद्यमान होना	37
	होना	27
	व्यवहार करना	28
	रहना	30
	मौजूद होना	37
विज्ज	विद्यमान होना	17, 18, 46
संपज्ज	प्राप्त होना	6
संभव	घटित होना	91
हव	होना	9, 16, 24, 35, 39, 46,
		50, 54, 58, 72, 83
हो	रहना	18
	होना	31, 38, 56, 57

अनियमित क्रिया

सन्ति	होना	31, 74

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रिया–कोश

सकर्मक

क्रिया	अर्थ	गा.सं.
अणुभव	भोगना	43, 75
अभिगच्छ	समझना	90
इच्छ	चाहना	75, 90
ए	करना/जाना	78
उवसंपय	स्वीकार करना	5
कर	करना	73
कुण	करना	66, 89
कुव्व	करना	67
खव	नाश करना	78
गेण्ह	ग्रहण करना	32, 52, 56
जह	छोड़ना	79, 81
जा	प्राप्त करना	15
	पहुँचना	80
जाण	जानना	25, 29, 32, 35, 41, 47, 49, 51, 55, 80, 89
णा	जानना	25
णिहण	नष्ट करना	88
पडियच्छ	स्वीकार करना	62
पणम	प्रणाम करना	1
परिणम	प्राप्त करना	19
	बदलना	32
	रूपान्तरित करना	42, 52

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परूव	प्रतिपादन करना	39
पस्स	देखना	29
पाव	पाना	11, 88
पेच्छ	देखना	32, 54
बुज्झ	जानना	86
भज	भोगना	72
भण	कहना	33
भम	भ्रमण करना	12
मण्ण	मानना	77
मुंच	छोड़ना	32
लह	प्राप्त करना	70, 79, 81
वंद	प्रणाम करना	3
विजाण	जानना	21, 33, 40, 48, 49
वियाण	जानना	64
सद्दह	श्रद्धा करना	62, 91
हव	प्राप्त करना	65, 66
हिंड	परिभ्रमण करना	77

अनियमित क्रिया

जणय	उत्पन्न करना	74

अनियमित कर्मवाच्य

खीयदि	क्षय की जाती है	86

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कृदन्त-कोश

संबंधक कृदन्त

कृदन्त शब्द	अर्थ	कृदन्त	गा.सं.
अभिभूय	व्याप्त होकर	संकृ अनि	30
उवलब्भ	समझ करके	संकृ अनि	88
ओगेण्हित्ता	अवग्रह करके	संकृ	55
किच्चा	करके	संकृ अनि	4, 82
चत्ता	छोड़कर	संकृ अनि	79
पप्पा	प्राप्त करके	संकृ अनि	65, 83
पडुच्च	अवलम्बन करके	संकृ अनि	50
भवीय→भविय	होकर	संकृ	12, 38
समासेज्ज	उपलब्ध करके	संकृ अनि	5
सुणिदूण	सुनकर	संकृ	62

हेत्वर्थक कृदन्त

णादुं	जानने के लिए	हेकृ	40, 48

भूतकालिक कृदन्त

अंतगय	अंत को पहुँचा हुआ	भूकृ अनि	61
अजाद	अनुत्पन्न	भूकृ अनि	41
अजाय	अनुत्पन्न	भूकृ अनि	39
अट्ट	पीड़ित	भूकृ अनि	71
अभिंधुद	अत्यधिक रूप से पकड़ा गया	भूकृ अनि	12

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अब्भुट्ठिद	उद्यत	भूकृ अनि	92
अभिरद	अत्यन्त आसक्त	भूकृ अनि	73
अविट्ठ	भीतर पहुँचा हुआ भी नहीं	भूकृ अनि	29
अहिहुद	दुःख का अनुभव किया हुए	भूकृ अनि	63
उच्छण्ण	ढँका हुआ	भूकृ अनि	83
उत्त	कहा	भूकृ अनि	42
उदिण्ण	उत्पन्न हुई	भूकृ अनि	75
उद्दिट्ठ	कहा गया	भूकृ अनि	23
उवजुत्त	संलग्न	भूकृ अनि	11
उवलद्ध	प्राप्त किया हुआ	भूकृ अनि	57
	समझ लिया	भूकृ अनि	81
खविद	समाप्त किया	भूकृ अनि	82
गद	आश्रित	भूकृ अनि	20
	आये हुए	भूकृ अनि	43
	प्राप्त हुआ	भूकृ अनि	55
गय	प्राप्त हुई	भूकृ अनि	41
जाद	हुआ	भूकृ	19
	टिका हुआ	भूकृ	22
	उत्पन्न हुआ	भूकृ	20, 59
	प्राप्त हआ	भूकृ	60
जुत्त	युक्त	भूकृ अनि	70
जुद	युक्त	भूकृ अनि	11

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ट्ठिय	स्थित	भूकृ अनि	31, 35
णट्ठ	नष्ट हुई	भूकृ अनि	38
	समाप्त किया गया	भूकृ अनि	61
णाद	जाना गया	भूकृ	58
णिद्दिट्ठ	कहा गया	भूकृ अनि	7, 16
णिवदिद	सम्मुख आये हुए	भूकृ	40
णिव्वत्त	बना हुआ	भूकृ अनि	10
णिव्वाद	संतृप्त हुए	भूकृ अनि	82
णिहद	नष्ट की गई	भूकृ अनि	92
तग्गय	उनमें स्थित	भूकृ अनि	26
दुट्ठ	द्वेष-युक्त हुआ	भूकृ अनि	43
धोद	धो दिया	भूकृ अनि	1
पक्खीण	नष्ट किया गया	भूकृ अनि	19
पच्छण्ण	ढका हुआ	भूकृ अनि	54
पण्णत्त	कहा गया	भूकृ अनि	8, 40, 52
परिणद	परिवर्तित	भूकृ अनि	8
	परिवर्तित/रूपान्तरित		11
परिवज्जिद	रहित	भूकृ	17
पलाय	नष्ट हुई	भूकृ	39
पविट्ठ	भीतर पहुँचा हुआ	भूकृ अनि	29
पसिद्ध	विभूषित	भूकृ अनि	13
भणिद	कहा गया	भूकृ	14, 57, 58, 60
भणिय	कहा गया	भूकृ	26, 34, 41, 43, 47, 59, 87

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भूद	हुआ	भूकृ अनि	15, 16, 40, 70
मद	कहा गया	भूकृ अनि	27
	मानी गयी	भूकृ अनि	45
महिद	पूजा गया	भूकृ	16
मुत्तिगद	मूर्त को प्राप्त हुआ	भूकृ अनि	55
रत्त	राग-युक्त हुआ	भूकृ अनि	43
	अनुरक्त	भूकृ अनि	69
लद्ध	प्राप्त	भूकृ अनि	16, 61, 76
वंदिद	वंदना किया गया	भूकृ	1
ववगद	समाप्त कर दिया गया	भूकृ अनि	81
विगद	रहित	भूकृ अनि	14
	नष्ट कर दिया		15, 62
विच्छिण्ण	हस्तक्षेप/ समाप्त किया गया	भूकृ अनि	76
विदिद	जान लिया गया	भूकृ अनि	14, 78
विमूढ	तादात्मय किया हुआ	भूकृ अनि	43
विरहिय	रहित	भूकृ अनि	45
विसेसिद	विशेषणों से युक्त	भूकृ अनि	92
विहीण	व्याकुलता रहित	भूकृ अनि	7
	रहित		17

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संछण्ण	पूर्णतः ढँका हुआ	भूकृ अनि	77
संजाय	उत्पन्न हुई	भूकृ अनि	38
संजुद	संयुक्त	भूकृ अनि	14
संतत्त	अत्यन्त पीड़ित	भूकृ अनि	75
संबद्ध	पूर्णतः निर्मित	भूकृ अनि	36
समक्खाद	कहा गया	भूकृ अनि	36
समुट्ठिद	उचित प्रकार से प्रयत्नशील/उठा हुआ	भूकृ अनि	79
सहिय	सहित	भूकृ अनि	76
सिद्ध	निष्पन्न प्रमाणित	भूकृ अनि	71

विधि कृदन्त

अधिदव्व	अध्ययन किया जाना चाहिये	विधिकृ अनि	86
कायव्व	किया जा सकता	विधिकृ अनि	67
णेय	जानने योग्य	विधिकृ अनि	15, 20, 23, 28, 29, 36, 42, 53
मुणेदव्व	समझा जाना चाहिये	विधिकृ	8
संखवइदव्व	समाप्त किये जाने चाहिये	विधिकृ अनि	84

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वर्तमान कृदन्त

अ–सहंत	सहन न करते हुए	वकृ	63
खवयंत	विसर्जन करता हुआ	वकृ अनि	42
जाणण्ण	जानता हुआ	वकृ अनि	52
परिणममाण	रूपान्तरण करता हुआ	वकृ	65

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विशेषण-कोश

शब्द	अर्थ	गा.सं.
अइसय	श्रेष्ठ	13
अक्खातीद	इन्द्रियातीत	22
अचेदण	चैतन्यरहित	25
अच्चंत	अत्यन्त	12
अट्ट	पीड़ित	71
अणंत	अनन्त	13, 19, 49, 59
अणिट्ठ	अनिष्ट	61
अणिंदिय	अतीन्द्रिय	19
अणोवम	अनुपम	13
अण्णोण्ण	परस्पर	28
अतीद	परे	13
	परे गया हुआ	29
अदिंदिय	अतीन्द्रिय	41, 53, 54
अधिक	प्रचुर	19
अ-पदेस	प्रदेश रहित	41
अपार	अनन्त	77
अप्पग	निर्मित	34
अबंधग	अबंधक	52
अभव्व	अभव्य	62
अमुत्त	अमूर्त	41, 53, 54, 55
अव्वुच्छिण्ण	सतत	13

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असक्क	असमर्थ	40
असब्भूद	अविद्यमान	37, 38
असुह	अशुभ	9, 12, 46, 72
असेस	समस्त	29
अहिअ	अधिक	24, 25
अहिसंबद्ध	जुड़ा हुआ	89
इट्ठ	वांछित	61, 65
इदर	अन्य	47, 54
उब्भव	उत्पन्न	78
उवओगप्पग	उपयोगात्मक	69
	उपयोगस्वभाववाला	73
उवदिट्ठ	उपदेश दिया गया	34
एगंतिय	अद्वितीय	59
कत्तार	करनेवाले	1
कुलिसाउहधर	वज्रायुध धारण करनेवाले	73
कुसल	कुशल	92
केवल	केवल	58, 60
केवलणाणि	केवलज्ञानी	20
केवलि	केवली	32
खाइग	क्षायिकी	45
घादि	घातिया कर्म	60, 62
घोर	भयानक	77
चक्कधर	चक्र धारण करनेवाले	73

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चित्त	नाना प्रकार के	51
जाणग	जाननेवाले	33, 35
जोग्ग	योग्य	55
जोण्ह	दिव्य	51, 88
झसिय	डाला हुआ	30
णाणप्पग	ज्ञानस्वरूप	89
णाणमय	ज्ञानमय	26
णाणि	ज्ञानी	28, 29, 50
णादु	ज्ञाता	42
णारय	नारकी	72
णिच्च	नित्य	50
	चिरस्थायी	51
णिम्मोह	आसक्ति रहित	90
णियद	नियत	43
णिरवसेस	शेष रहित	32
णेरइय	नरक में उत्पन्न	12
तक्कालिग/	वर्तमानकाल संबंधी	37
तक्कालिय		47
तम्मय	उसमय/उसरूप	8
तिक्कालिग	तीन काल संबंधी	48
तित्थ	तारने में समर्थ	1
तिमिरहर	अंधकार को हटानेवाला	67

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तिहुवणत्थ	तीन लोक में स्थित	48
दिव्व	दिव्य	39
दुहिद	दुःखी	75
देहि	शरीरधारी	66
पच्चक्ख	प्रत्यक्ष	21, 38, 86
पज्जयत्थ	पर्याय में स्थित/रहनेवाला	10
पत्तेग	प्रत्येक	3
पदीवयर	प्रकाश करनेवाले	33
पर	पार	15
	पर	32, 36, 89, 90
	अन्य	58
परम	उत्कृष्ट/सर्वोत्तम	53, 62
परिणद	रूपान्तरित	84
पहाण	प्रधान	5, 6
पुव्व	युक्त/से युक्त	21, 40
भव्व	भव्य	62
मुत्त	मूर्त	41, 53, 54, 55
मूढ	संशयात्मक	83
रम्म	रमणीय	63, 71
रहिद	रहित	59
वर	श्रेष्ठ	19
विचित्त	अनेक प्रकार के	47
वित्थड	फैला हुआ	59, 61

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विमल	शुद्ध	59
विविह	नाना प्रकार का	70, 74, 84
विसम	असमान	47, 51
	कष्टदायक	76
विसयवस	विषयों के अधीन	66
विसुद्ध	विशुद्ध/शुद्ध	2, 5, 15, 78
संबद्ध	युक्त	91
संभव	उत्पन्न	72
सक्क	संभव	48
सग	स्वयं का	54
सद	विद्यमान	37
स-पज्जय	पर्याय-सहित	48
स-पदेस	प्रदेश-सहित	41
सपर	पर की अपेक्षा रखनेवाला	76
सब्भूद	विद्यमान	18
स (भासा)	अपनी (दीप्ति)	30
सम	समान	14
समत्त	पूर्ण	59
समस्सिद	पूर्णतः निर्भर	65
समिद्ध	सम्पन्न	22
समुत्थ	उत्पन्न	13
समुब्भव	उत्पन्न	74
सयल	समस्त	51

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	सबको	54
सविसेस	विशेष सत्ता से युक्त	91
सव्वगद	सर्वव्यापक	26, 50
सव्वगय	सर्वव्यापक	23, 31
सव्वण्हु	सर्वज्ञ	16
स-सव्व	विद्यमान सभी	2
सहज	प्रकृतिदत्त	63
सहावसिद्ध	स्वभाव से निष्पन्न	71
सिद्ध	सिद्ध	2, 4
	प्रमाणित	71
सुद्ध	शुद्ध	9, 11, 13, 14, 79, 81
सुयकेवलि	श्रुतकेवली	33
सुह	शुभ	9, 11, 46, 69, 70, 72, 73, 79
सुहिद	सुखी	73
सेस	शेष	2
हीण	कम	24, 25

अनियमित विशेषण

तावदि	उतने तक	70

संख्यावाची विशेषण

एग	एक	48, 49

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सर्वनाम-कोश

सर्वनाम शब्द	अर्थ	लिंग	गा.सं.
एअ	यह	पु., नपुं	85
एत	यह	पु., नपुं	1
एद	यह	पु., नपुं	91
इम	यह	पु., नपुं	43
क	कौन	पु., नपुं	39
	किसी	पु., नपुं	18
किं	क्या	पु., नपुं	67
ज	जो	पु., नपुं.	7, 8, 15, 24, 33, 35, 38, 40, 47, 48, 53, 54, 58, 60, 61, 64, 77, 78, 80, 88, 89, 91, 92
त	वह	पु., नपुं.	3, 5, 7, 16, 17, 19, 20, 21, 24, 25, 26, 30, 31, 32, 33, 34, 35, 37, 38, 39, 40, 41, 42, 43, 44, 45, 46, 47, 48, 49, 50, 52, 53, 54, 55, 56, 57, 58, 60, 61, 62, 63, 64, 71, 72, 75, 78, 79, 80,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

		81, 82, 83, 84, 87,
		88, 89, 91
ता	वह	45
सव्व	सभी/सब पु., नपुं	2, 3, 4, 26, 82
	समस्त	16, 18, 21, 22, 32, 35,
		37, 46, 49, 61, 88

अनियमित सर्वनाम

तासिं	उन	37

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अव्यय-कोश

अव्यय	अर्थ	गा.सं.
अचिरेण (कालेण)	थोड़े (समय में)	88
अजधा	विपरीत	85
अत्थि	है	10, 20
अवि	भी	52
अहो	आश्चर्य है!	51
इति	ही	7, 8, 14, 45, 58, 60, 62
	चूँकि	27
	इस कारण	39
	इसलिए	42, 57
	निश्चय ही	59, 60, 62
	इस प्रकार	16, 83, 87
	और	92
	पादपूरक	36, 40, 77
इव	जैसे कि	29
	समान	37
	मानो	73
इह	इस लोक में	10, 24, 30
एगंतेण	आवश्यकरूप से	66
एव	भी	3
	ही	4, 15, 16, 17, 22, 24, 42, 65, 68, 76

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं	इस प्रकार	77, 78
कधं	कैसे	57
कमसो	क्रम से	50
कहं	कैसे	25, 31
किंचि	कुछ	22
किध	कैसे	49
किह	कैसे	72
खलु	ही	21
	वास्तव में	7, 18, 38
	निश्चय ही	80
च	और	4, 13, 19, 36, 41, 54, 60, 89, 90
	तथा	39
	पादपूरक	53, 68
चेव	ही	60
	और	69
जं	चूँकि	76
जइ	यदि	64, 67
जत्तो	क्योंकि	5
जदा	जब	9
जदि	यदि	11, 25, 31, 39, 42, 46, 49, 50, 72, 74, 79, 81, 89, 90

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	जो	58
जम्हा	क्योंकि	20
	चूँकि	60
जह	जिस प्रकार	68
जहा	जिस प्रकार	30
जुगवं	एक ही साथ	47, 48, 49, 51
	एक ही समय में	56
ण	नहीं	10, 20, 24, 25, 27, 29, 31, 35, 39, 46, 48, 49, 52, 60, 64, 65, 66, 77, 78, 79, 91
	न	32, 50
णत्थि	नहीं	22, 67, 71, 77
णेव	नहीं	21, 28, 38, 42, 56, 57, 91
	न ही	32, 50, 52
णो	नहीं	62
णमो	नमस्कार	4, 82
णिच्छयदो	निश्चयपूर्वक	89
णियदं	लगातार	29
णियदयो	अचूक रूप से	44
तं	इसलिए	76
तण्ण	वह नहीं	55

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तक्कालं	उसी समय	8
तत्थ	वहाँ	67
तदा	तब	9
तध	उसी प्रकार	82
तम्हा	इसलिये	8, 20, 23, 27, 36, 45, 84, 86, 90
तह	तथा	4, 16
	उसी प्रकार	30, 67
तहा	उसी प्रकार	53, 68
	और	68
	उस (पूर्वोक्त) रीति से	76
तिहा	तीन प्रकार से	36
तु	निश्चय ही	23
	परन्तु	58, 61
	ही	59
तेण	इसलिए	52
दु	किन्तु	18
	पादपूरक	20
	परन्तु	66
धुव	अवश्य	24
पत्तेगं	पृथक-पृथक	3
परदो	पर से	58

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिणमदो	स्वभाव से	21
पि	पादपूरक	30
	भी	71
पुण	इसके अनन्तर	2
	और	20
	फिर भी	75
	चूँकि	61
पुणो	फिर	17, 36
	और	45
य	तथा	2, 44, 75, 85
	और	3, 17, 18, 26, 56, 68, 82, 85
	पादपूरक	26, 74
	चूँकि	34
व	तथा	11, 72
	जैसे कि	28
	और	27, 31
	या	46, 70
	अथवा	83, 84
	पादपूरक	11, 72
वा	पादपूरक	24, 39
	या	9, 20, 43, 70, 78
	भी	27, 48, 66, 79

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अथवा	24, 55, 66, 70, 83
	और	25, 31, 62
	तथा	69, 70
वि	निश्चय ही	18
	भी	22, 46, 68
	ही	26, 52, 82
विणा	बिना	10, 25, 27
विसयत्थं	विषयों के लिए	64
विसेसदो	खास तोर से	37
व्व	समान	44
सं	पूर्णतः	36
	खूब	86
सदा	हमेशा	12
	सदा	22
सब्भावं	सब्भाव से	64
समगं समगं	साथ-साथ	3
समंत (समंता)	सब और से/ चारों तरफ से	22
समंतदो	सब ओर से	32, 47
सम्मं	अच्छी तरह	81
सयं	स्वयं	15, 16, 22, 55, 59, 65, 66, 67, 68
	स्वयं ही	35

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अपने	46
सव्वं	पूर्णरूप से	47
सव्वत्थ	सभी जगह	51
सहावेण	स्वभावपूर्वक	65
सु	पूरी तरह से	14
हि	निश्चय ही	9, 17, 22, 28, 37, 39, 66, 74, 91
	पादपूरक	77
	ही	33, 38, 45, 51, 58
	इसलिए	34, 61
	क्योंकि	64
हु	निश्चय ही	7

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट–2

छंद[1]

छंद के दो भेद माने गए है-

1. मात्रिक छंद 2. वर्णिक छंद

1. मात्रिक छंद– मात्राओं की संख्या पर आधारित छंदो को 'मात्रिक छंद' कहते हैं। इनमें छंद के प्रत्येक चरण की मात्राएँ निर्धारित रहती हैं। किसी वर्ण के उच्चारण में लगनेवाले समय के आधार पर दो प्रकार की मात्राएँ मानी गई हैं- ह्रस्व और दीर्घ। ह्रस्व (लघु) वर्ण की एक मात्रा और दीर्घ (गुरु) वर्ण की दो मात्राएँ गिनी जाती हैं-

लघु (ल) (।) (ह्रस्व)

गुरु (ग) (ऽ) (दीर्घ)

(1) संयुक्त वर्णों से पूर्व का वर्ण यदि लघु है तो वह दीर्घ/गुरु माना जाता है। जैसे- 'मुच्छिय' में 'च्छि' से पूर्व का 'मु' वर्ण गुरु माना जायेगा।

(2)जो वर्ण दीर्घस्वर से संयुक्त होगा वह दीर्घ/गुरु माना जायेगा। जैसे- रामे। यहाँ शब्द में 'रा'और 'मे' दीर्घ वर्ण है।

(3) अनुस्वार-युक्त ह्रस्व वर्ण भी दीर्घ/गुरु माने जाते हैं। जैसे- 'वंदिऊण' में 'व' ह्रस्व वर्ण है किन्तु इस पर अनुस्वार होने से यह गुरु (ऽ) माना जायेगा।

(4) चरण के अन्तवाला ह्रस्व वर्ण भी यदि आवश्यक हो तो दीर्घ/गुरु मान लिया जाता है और यदि गुरु मानने की आवश्यकता न हो तो वह ह्रस्व या गुरु जैसा भी हो बना रहेगा।

---

1. देखें, अपभ्रंश अभ्यास सौरभ (छंद एवं अलंकार)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

2. वर्णिक छंद– जिस प्रकार मात्रिक छंदों में मात्राओं की गिनती होती है उसी प्रकार वर्णिक छंदों में वर्णों की गणना की जाती है। वर्णों की गणना के लिए गणों का विधान महत्त्वपूर्ण है। प्रत्येक गण तीन मात्राओं का समूह होता है। गण आठ हैं जिन्हें नीचे मात्राओं सहित दर्शाया गया है-

यगण	-	।ऽऽ
मगण	-	ऽऽऽ
तगण	-	ऽऽ।
रगण	-	ऽ।ऽ
जगण	-	।ऽ।
भगण	-	ऽ।ऽ
नगण	-	।।।
सगण	-	।।ऽ

प्रवचनसार में मुख्यतया **गाहा छंद** का ही प्रयोग किया गया है। इसलिए यहाँ **गाहा छंद** के लक्षण और उदाहरण दिये जा रहे हैं।

लक्षण–

गाहा छंद के प्रथम और तृतीय पाद में 12 मात्राएँ, द्वितीय पाद में 18 तथा चतुर्थ पाद में 15 मात्राएँ होती हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उदाहरण–

ऽ ऽ ऽऽ ।।ऽ ।।ऽऽऽ।ऽ। ऽऽऽ
ते ते सव्वे समगं समगं पत्तेगमेव पत्तेगं।
ऽऽ। । ऽऽऽ ।।ऽऽ ऽ।ऽ ऽऽ
वंदामि य वट्टंते अरहंते माणुसे खेत्ते।।

ऽऽऽ ।। ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।ऽ । ऽऽऽ
चारित्तं खलु धम्मो धम्मो जो सो समो त्ति णिद्दिट्ठो।
ऽ ऽ ऽ ।। ऽऽ ।।ऽऽ ऽ।ऽ ।।ऽ
मोहक्खोहविहीणो परिणामो अप्पणो हु समो।।

ऽ । । ऽ ।।ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ। ।।ऽ ऽ
णत्थि विणा परिणामं अत्थो अत्थं विणेह परिणामो।
ऽ ।।ऽ ।ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ।ऽ ऽ ऽ
दव्वगुणपज्जयत्थो अत्थो अत्थित्तणिव्वत्तो।।

ऽ ऽ ऽऽ ।।ऽ ऽ ऽ ।। ऽ।ऽ।ऽ।।ऽ
धम्मेण परिणदप्पा अप्पा जदि सुद्धसंपयोगजुदो।
ऽ ।। ऽ ऽ । ।ऽ । ऽ।ऽऽ । ऽ ।। ऽ
पावदि णिव्वाणसुहं सुहोवजुत्तो व सग्गसुहं।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट – 3

सम्मति

द्रव्यसंग्रह

आपके द्वारा प्रेषित 'द्रव्यसंग्रह' (2013) की प्रति मिली। आपके सम्पादन और श्रीमती शकुन्तला जैन के अनुवाद के साथ द्रव्यसंग्रह का यह उपयोगी संस्करण तैयार हुआ है। इससे सिद्धान्त और प्राकृत व्याकरण दोनों का ज्ञान पाठकों को हो सकेगा। व्याकरणात्मक विश्लेषण के साथ तो प्रथम संस्करण ही है द्रव्यसंग्रह का। इस सारस्वत अध्ययन के लिए आप सबको बधाई। पुस्तक परिशिष्ट में दिये गये सभी कोश प्राकृत शब्दशास्त्र के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। गाथाओं का छन्द-विश्लेषण भी पहली बार देखने में आया है। यह संस्करण आदर्श है सम्पादन कार्य का और सुन्दर निर्दोष प्रकाशन का।

द्रव्यसंग्रह प्रायः जैन शिक्षण शिविर और सभी प्राकृत की परीक्षाओं के कोर्स में है। श्रवणबेलगोला, मैसूर, सोलापुर, उदयपुर, जयपुर, दिल्ली, नागपुर आदि स्थानों के संचालित पाठ्यक्रमों में यह द्रव्यसंग्रह निर्धारित है। लगभग 6-7 हजार छात्र प्रतिवर्ष इसकी परीक्षा देते हैं। अतः इसका एक छात्र संस्करण भी पेपर बैक में आप लोग प्रकाशित करें तो समाजसेवा होगी और छात्रों को ज्ञानदान भी। श्री महावीरजी संस्थान इसमें समर्थ है। प्राकृत के सभी विद्वानों और विभागों को भी आपका यह द्रव्यसंग्रह पहुँचना चाहिए।

डॉ. प्रेमसुमन जैन
पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
जैनविद्या एवं प्राकृत विभाग
मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय
उदयपुर

निर्देशन एवं संपादन- डॉ. कमलचन्द सोगाणी
अनुवादक- श्रीमती शकुन्तला जैन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सम्मति

द्रव्यसंग्रह

आपके द्वारा संपादित एवं श्रीमती शकुन्तला जैन द्वारा अनूदित 'द्रव्यसंग्रह' ग्रन्थ प्राप्त कर अतीव हर्ष का अनुभव हुआ। वस्तुतः इस ग्रन्थ की प्रत्येक गाथा के प्रत्येक पदों का अलग-अलग हिन्दी अनुवाद वह भी प्राकृत व्याकरण के आधार पर समझाते हुए अन्वय और अर्थ सहित- इन सब विशेषताओं के कारण इतना सरल-सहज बन गया है कि इस ग्रन्थ के आधार पर प्राकृत भाषा के दूसरे ग्रन्थों को समझा जा सकता है। वस्तुतः इस ग्रन्थ को पढ़कर ऐसा लगा जैसे यह द्रव्यसंग्रह का नया-अवतार ही हो गया हो।

अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जैनविद्या संस्थान के माध्यम से प्राकृत-अपभ्रंश भाषाओं का जो उत्कर्ष और प्रसार आपके और आपकी शिष्य मण्डली के माध्यम से हो रहा है, उसके लिए सब आपके चिरऋणी रहेंगे।

नये-नये ग्रन्थ आप नये-नये रूपों में प्रकाशित कर मुझे भिजवा देते हैं, इसके लिए हम आपके और संस्थान के प्रति आभार व्यक्त करते हैं। शेष शुभ।

प्रो. फूलचन्द जैन प्रेमी
पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, जैनदर्शन विभाग
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी
एवं
निदेशक
बी. एल. प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान
दिल्ली

निर्देशन एवं संपादन- डॉ. कमलचन्द सोगाणी
अनुवादक- श्रीमती शकुन्तला जैन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सम्मति
द्रव्यसंग्रह

आप द्वारा संपादित व श्रीमती शकुन्तला जैन द्वारा अनुवादित 'द्रव्यसंग्रह' पुस्तक प्राप्त हुई। वैस तो 'द्रव्यसंग्रह' के हिन्दी अनुवाद की अनेक कृतियाँ उपलब्ध हैं, पर आपने इसे एक नये आयाम में प्रस्तुत किया है। निःसन्देह यह प्रयास सराहनीय है। प्राकृत भाषा के विद्वानों और अध्ययनार्थियों के लिए यह एक अत्यन्त उपयोगी कृति सिद्ध होगी, ऐसा मुझे विश्वास है। श्रीमती शकुन्तला जैन के इस प्रयास के लिए वे बधाई की पात्र हैं।

बुद्धिप्रकाश 'भास्कर'
एम.ए. (हिन्दी) शास्त्री-शिक्षा व दर्शन, साहित्यरत्न
जयपुर

निर्देशन व संपादन- डॉ. कमलचन्द सोगाणी
अनुवादक- श्रीमती शकुन्तला जैन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सहायक पुस्तकें एवं कोश

1.	प्रवचनसार	: प्रस्तावना व अंग्रेजी अनुवाद- डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये हिन्दी अनुवादक-हेमराज पाण्डेय (श्रीपरमश्रुत प्रभावक मण्डल, श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम, अगास, चतुर्थ आवृत्ति, 1984)
2.	प्रवचनसार	: हिन्दी अनुवादक-पण्डित राजकिशोर जैन (श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्दपरमागम ट्रस्ट, इन्दौर एवं पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर)
3.	प्रवचनसार	: हिन्दी अनुवादक- श्री पण्डित परमेष्ठीदासजी न्यायतीर्थ (श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट, सोनगढ़ (सौराष्ट्र), 1964)
4.	प्रवचनसार	: सम्पादन एवं अनुवाद मुनि श्री 108 प्रणम्यसागरजी महाराज (धर्मोदय साहित्य प्रकाशन, सागर (म.प्र.), 2007)
5.	पाइय-सद्द-महण्णवो	: पं. हरगोविन्ददास त्रिविक्रमचन्द्र सेठ (प्राकृत ग्रन्थ परिषद्, वाराणसी, 1986)
6.	अपभ्रंश-हिन्दी कोश	: डॉ. नरेश कुमार (डी. के प्रिंटवर्ल्ड (प्रा.) लि., नई दिल्ली, 1999)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

7.	संस्कृत-हिन्दी कोश	: वामन शिवराम आप्टे (कमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996)
8.	हेमचन्द्र प्राकृत व्याकरण, भाग 1-2	: व्याख्याता श्री प्यारचन्द जी महाराज (श्री जैन दिवाकर-दिव्य ज्योति कार्यालय, मेवाड़ी बाजार, ब्यावर, 2006)
9.	प्राकृत भाषाओं का व्याकरण	: लेखक -डॉ. आर. पिशल हिन्दी अनुवादक - डॉ. हेमचन्द्र जोशी (बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, 1958)
10.	प्राकृत रचना सौरभ	: डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 2003)
11.	प्राकृत अभ्यास सौरभ	: डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 2004)
12.	अपभ्रंश अभ्यास सौरभ (छंद एवं अलंकार)	: डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर,)
13.	प्राकृत- हिन्दी-व्याकरण (भाग-1, 2)	: लेखिका- श्रीमती शकुन्तला जैन संपादक- डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 2012, 2013)
14.	प्राकृत-व्याकरण (संधि- समास- कारक-तद्धित-स्त्रीप्रत्यय-अव्यय)	: डॉ. कमलचन्द सोगाणी (अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, 2008)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org